शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 6 अंक : 5 1 दिसम्बर 2013

(मार्गशीर्ष-पौष, विक्रम संवत् 2070)

संरक्षक

मुकुन्द कुलकर्णी

प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक

प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

सम्पादक मण्डल

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक

बजरंग प्रसाद मजेजी

❖

प्रेषण प्रभारी

बसन्त जिन्दल 9414716585

प्रकाशकीय कार्यालयः
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाषः 9414040403,9782873467

दिल्ली ब्यूरो कार्यालय
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाषः 011-22914799

E-mail:
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 15/-
वार्षिक शुल्क 150/-
आजीवन (दस वर्ष) 1200/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक
में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल
का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

शाश्वत जीवन में स्थापित सांस्कृतिक मूल्य- डॉ. नन्द किशोर पाण्डेय

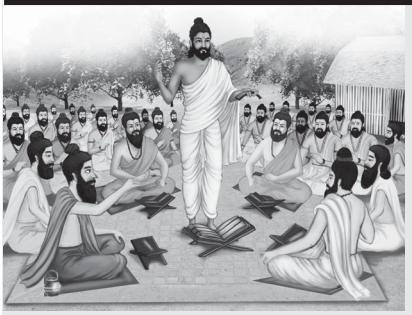

कुछ स्थापनाएँ जैसे-जैसे करनी वैसी भरनी, लोभ महापाप है, पुण्य सभी सुखों की खान है, पाप कर्म शुभ का उदय नहीं होने देते, भोग से तृप्ति नहीं होती, कामी को भय और लज्जा नहीं होती, गुणियों का संसर्ग गुण देता है, शील परम भूषण है, दृश्यमान जगत क्षणभंगुर है, सत्संगति सर्वोत्तम सुख है, बड़ों को क्षमा करनी ही चाहिए, स्वस्थ शरीर धर्म का साधन है, कर्म भाग्य को परिवर्तित करता है, उद्यम के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होता, स्वयं की प्रशंसा और परनिन्दा त्याज्य है, श्रेष्ठ जन न्याय के पद से विचलित नहीं होते, पुण्यात्मा विजय को प्राप्त करता है, संकल्प की पूर्ति प्रयत्न पूर्वक होनी चाहिए।

8

अनुक्रम

4.	शाश्वत जीवन मूल्यों से परिपूर्ण भारतीय संस्कृति	- सन्तोष पाण्डेय
6.	अहं ब्रह्मास्मि से उपजी संस्कृति	- इन्दुमति काटदरे
12.	जीवन मूल्यों के क्षरण की चुनौती	- प्रो. सीताराम व्यास
14.	आध्यात्मिकता से गुंथे जीवन मूल्य	- हनुमान सिंह राठौड़
18.	वर्ण-व्यवस्था की बारीकियाँ	- डा. नन्दसिंह नरूका
20.	Life !	- N. Krishnappa
26.	भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में शाश्वत जीवन मूल्य	- डॉ. बजरंग लाल गुप्ता
28.	शाश्वत जीवन मूल्यों की वैज्ञानिकता	- विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
30	भारतीय जीवन मूल्य से दूर वर्तमान शिक्षा	- डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
32.	बाजार से दिग्भ्रमित परिवार	- डॉ. मधुर मोहन रंगा
34.	भारतीय संस्कृति - जीवन मूल्यों के रक्षण से संभव	- बजरंग प्रसाद मजेजी
36.	बदलते नैतिक मानदण्ड और शाश्वत जीवन मूल्य	- बजरंगी सिंह
38.	भारत के उर्जा बिन्दू	- डॉ. अखिलेश्वर शर्मा
39.	विज्ञान और तकनीकी शिक्षण में मूल्य शिक्षा	- दीनानाथ बत्रा
42.	Our Concern towards Eternal Values	- T. S. Girishkumar
46.	What Indian Youth Need to Know ...	- M. Pramod Kumar
50.	जीवनमुक्ति का वैज्ञानिक आधार	- विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
52.	गतिविधि	

Spirituality to world

- Prof. K. Narahari

It is our common experience that most politicians, Administrators, insincere social workers etc suffer from the decease of exploiting the people in the name of service. Those who take bribe and have greed for money have no concern even for the poor, the suffering people and genuine social works. They are devoid of human considerations and justice.

24

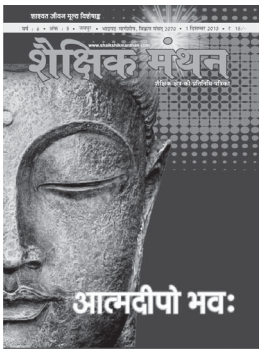

भारतीय संस्कृति में जीवन के शाश्वत मूल्यों को 'धर्म' कहा गया है। धर्म वह है जो धारण करने योग्य है। इसका संबंध उपासना पद्धति से कतई नहीं है। मनुष्य का आचरण धर्म से संचालित होना चाहिये। धर्म जो धारण करने योग्य है, वास्तविक जीवन के व्यवहार में कर्तव्य के रूप में आचरण योग्य है। भारतीय संस्कृति में धर्म के अन्तर्गत धैर्य, क्षमा, संयम, अस्तेय, शुचिता, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य तथा अक्रोध को स्थान दिया गया है। सत्य, अहिंसा, शांति, चरित्र, प्रेम, सहजीवन, वसुधैव कुटुम्बकम, प्रकृति के साथ सामंजस्य तथा सहजीवन जैसे अनेक शाश्वत मूल्य हैं, जिनका अनुसरण भारतीय जीवन पद्धति का मूलाधार है।

शाश्वत जीवन मूल्यों से परिपूर्ण भारतीय संस्कृति

❑ **सन्तोष पाण्डेय**

संपादकीय

भारतीय संस्कृति विश्व की एकमात्र ऐसी संस्कृति है, जो समय के थपेड़ों से भी अक्षुण्ण रही है। अनेक संस्कृतियाँ जहाँ पुष्पित-पल्लवित हुई, एक चरम बिन्दु पर पहुँचने के बाद काल के गर्भ में समा गई। इन संस्कृतियों के काल कवलित होने का मुख्य कारण समय निरपेक्ष जीवनमूल्यों की जीने में असमर्थता रही। संस्कृति के उत्कर्ष व चिरन्तनता के कुछ मूल तत्व होते हैं। सभी संस्कृतियों व समाजों का जीवन को देखने एवं जीने का एक विश्व दृष्टि (World & Views) होती है। भारतीय संस्कृति की विश्व-दृष्टि ऐसे सिद्धान्तों, विचारों व मूल्यों पर आधारित रही जो सार्वकालिक हैं। संस्कृति का उत्थान व विकास वहाँ की सभ्यता व समाज की विरासत को रेखांकित करता है। भारतीय विश्व-दृष्टि के अनुसार विकास आध्यात्मिक व भौतिक आधारों पर निर्मित सिद्धान्तों के निरुपण से होता है। भौतिक विकास सभ्यता का परिचायक होता है, जब कि आध्यात्मिक विकास मनुष्य में सोच, निर्माण व रचनात्मकता को प्रेरित कर संपूर्ण जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाकर संपूर्ण प्रकृति व विश्व के साथ जोड़ता है। भारतीय संस्कृति का सबल पक्ष अध्यात्म है। भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक पक्ष को अनादिकाल से ऋषि-मुनियों, विचारकों, समाज को नई दृष्टि प्रदाताओं ने पुष्ट किया है। वेद, उपनिषद, शास्त्र, श्रीमद्भागवत गीता, श्री रामचरित मानस इसके प्रमाण हैं। वेदान्त मय भारतीय संस्कृति ने सर्वमान्य सार्वकालिक ऐसे सिद्धान्तों को अपनाया जिनके अनुसरण से मानव जीवन श्रेष्ठ बनता है। इन्हें ही जीवन के शाश्वत मूल्य कहा जाता है। वेदों, उपनिषदों, शास्त्रों व अन्य भारतीय धर्म ग्रन्थों में जीवन को सार्थक व उपयोगी बनाने वाले अनेक सिद्धान्तों व मूल्यों का प्रत्यक्ष उल्लेख किया है और विकसित किया है। इन्हीं से मानवीय जीवन नियंत्रित व निरुपित होता है। मानव जीवन के सभी कार्य किसी न किसी रूप में इन्हीं मूल्यों के प्रभाव में संचालित होते हैं। जीवन मूल्य वे सिद्धान्त हैं, जो सर्वमान्य, सर्वकालिक एवं विश्वव्यापी होते हैं। ये मनुष्य की गतिविधियों और कार्यों को निर्देशित करते हैं, ये समाज में अन्तर्निहित होते हैं, जो सभी समाजों समुदायों और धर्मों में सार्वकालिक रूप में समाहित होते हैं। शाश्वत जीवन मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व में अच्छाइयों के रूप में समाये रहते हैं। इन मूल्यों के क्षरण से न केवल व्यक्ति प्रभावित होता है, वरन परिवार, समाज, समुदाय और राष्ट्र भी शनैः शनैः टूटने लगते हैं। भारतीय संस्कृति के शाश्वत जीवन मूल्य राष्ट्र के ताने-बाने में समाये हैं।

भारत में अति प्राचीन काल से ही ऐतिहासिक, भौगोलिक व सामाजिक परम्पराओं में विविधता रही है। भिन्न-भिन्न समाजों की परम्पराओं, सोचने के तरीकों और जीवन जीने के तरीकों में भिन्नता रही है फिर भी कुछ ऐसी समानतायें हैं जो सम्पूर्ण देश को एकसूत्र में पिरोती हैं। यही शाश्वत जीवन मूल्य हैं। इनकी देश में दीर्घ परम्परा रही है। यहाँ अनादिकाल से ही साधु-संतों, ऋषियों-मुनियों व विचारकों जो चाहे किसी भी धर्म के अनुयायी क्यों न रहे हों, सभी ने कुछ शाश्वत जीवन मूल्यों पर जोर दिया है। इन्हें आगे की पीढ़ी को हस्तान्तरित करना ही वर्तमान पीढी का दायित्व है। आगे आने वाली पीढ़ी के जीवन के निर्माण, मनुष्य के निर्माण, चरित्र निर्माण में ये शाश्वत मूल्य ही योग देते हैं। प्रश्न यह है कि आखिर ये जीवन के शाश्वत मूल्य क्या हैं? इन्हें किस प्रकार भावी पीढ़ी के जीवन में उतारा जाय। इन पर विचार आज की पीढ़ी को करना है। भारतीय संस्कृति में जीवन के शाश्वत मूल्यों को 'धर्म' कहा गया है। धर्म वह है जो धारण करने योग्य है। इसका संबंध उपासना पद्धति से कतई नहीं है। मनुष्य का आचरण धर्म से संचालित होना चाहिये। धर्म जो धारण करने योग्य है, वास्तविक जीवन के व्यवहार में कर्तव्य के रूप में आचरण योग्य है। भारतीय संस्कृति में धर्म के अन्तर्गत धैर्य, क्षमा, संयम, अस्तेय, शुचिता, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य तथा अक्रोध को स्थान दिया गया है। सत्य, अहिंसा, शांति, चरित्र, प्रेम, सहजीवन, वसुधैव कुटुम्बकम, प्रकृति के साथ सामंजस्य तथा सहजीवन जैसे अनेक शाश्वत मूल्य

हैं, जिनका अनुसरण भारतीय जीवन पद्धति का मूलाधार है। सत्य व अहिंसा को अपनाना भारतीय जीवन पद्धति का लक्ष्य है। सत्य की खोज आवश्यक है। महात्मा गांधी ने सभी प्रकार की विषम से विषम परिस्थिति में सत्य अहिंसा व प्रेम का मार्ग नहीं त्यागा। उन्होंने इन्हें अपने जीवन का अभिन्न अंग बनाया। भगवान गौतम बुद्ध ने भी सत्य और अहिंसा को आदर्श माना। 'सत्यमेव जयते' तथा 'अहिंसा परमो धर्म' का उद्घोष इसी तथ्य को बतलाता है। परोपकार, पुण्य अर्जित करना, त्याग व अपरिग्रह का आग्रह भी इसी प्रकार के जीवन मूल्य है। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष जीवन के महत्वपूर्ण जीवन मूल्य हैं। स्वाभिमान, विनय, शील, कर्तव्य पालन मनुष्य के जीवन को उपयोगी बनाने वाले जीवन मूल्य हैं। श्रीमद् भागवत गीता जहाँ मनुष्य को निष्काम कर्म के लिये प्रेरित करती है वहीं श्री रामचरित मानस मर्यादा पुरुषोतम श्रीराम के रूप में एक श्रेष्ठ व त्रुटि शून्य मानवीय चरित्र का निरुपण करती है। ये सभी मानव जीवन के आराध्य हैं।

भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्यों में पारिवारिक मूल्यों, सामाजिक मूल्यों, नैतिक मूल्यों, राजधर्म, मानवीय मूल्यों को प्रमुखता प्रदान की है। मनुष्य में शाश्वत जीवन मूल्यों के बीजारोपण में परिवार की भूमिका प्रमुख है। माँ मनुष्य की प्रथम शिक्षक है। धर्माचरण चरित्र व व्यवहार का समावेश बालक में परिवार द्वारा ही होता है। बड़ों के प्रति आदर भाव, अतिथि के प्रति सत्कार भाव, सत्य, अहिंसा, प्राणीमात्र से प्रेम, पर्यावरण से परिचय व संरक्षण परिवार द्वारा ही प्रेरित होता है। सामाजिक मूल्यों का व्यक्तित्व में समावेश शिक्षा के माध्यम से होता है। शिक्षा मानव के बहुपक्षीय विकास का माध्यम है। मानव के बहुपक्षीय विकास के मुख्य पहलू बौद्धिक, शारीरिक, आध्यात्मिक व नैतिक विकास है? मनुष्य के चरित्र का निर्माण व मनुष्य के रूप में निर्माण इन्हीं पहलुओं के विकास में निहित है, प्राचीन काल की गुरुकुल व्यवस्था शाश्वत जीवन मूल्यों को व्यक्ति के व्यक्तित्व में समाहित करने का बड़ा माध्यम थी। वर्तमान में यह कार्य शिक्षा व्यवस्था निष्पादित करती

है। इन जीवन मूल्यों को व्यक्ति के व्यक्तित्व में समाहित करने का दायित्व मूलत: माता-पिता व गुरु का है। शिक्षा ही जीवन को शुभ और कल्याणकारी बनाती है।

आज का समय भौतिकता प्रधान है। मनुष्य की सफलता-असफलता, यश-अपयश, श्रेष्ठता, सामाजिक स्थान भौतिक सफलताओं से निर्धारित होने लगे हैं। सफलता प्राप्ति के लिये सभी प्रकार के साधनों के उपयोग से मनुष्य जीवन के शाश्वत मूल्यों का परिहरण कर रहा है। सर्वधर्म समभाव, सामंजस्य, सहजीवन, विश्वबन्धुत्व, सहनशीलता, प्रेम, सद्भाव कल्याण की भावना, पारिवारिक व सामाजिक मूल्यों का परित्याग आदि का अभाव भौतिक सफलताओं का आधार बन रहा है, मनुष्य द्वारा उपभोग को उच्चतम स्तर तक पहुँचाने के लिये पर्यावरण की उपेक्षा की जा रही है? प्रकृति से व्यापक छेड़-छाड़ हो रही है। ये सभी शुभ संकेत नहीं हैं। राजनीति भी धर्माचरण से परहेज कर रही है। समाज को धर्म, जाति, सम्प्रदाय के आधार पर बाँटने व तोड़ने का कार्य आज की मूल्यविहीन राजनीति का ही परिणाम है। शिक्षा व्यवस्था भी भौतिकतावादी लक्ष्यों से प्रभावित व निर्देशित हो रही है। ये सभी लक्षण भारतीय संस्कृति के शाश्वत जीवन मूल्यों के परिहरण के परिचायक हैं।

शाश्वत जीवन मूल्यों को पुनर्स्थापित करने का एक मात्र मार्ग शिक्षा है। शिक्षा व्यवस्था को मूल्यपरक बना कर ही इन शाश्वत मूल्यों को भावी पीढ़ी तक पहुँचाया जा सकता है। समाज के सभी वर्ग, समुदाय और विचारवान लोग स्वीकार करते हैं कि भारतीय जीवन के शाश्वत मूल्यों को शिक्षा व्यवस्था का आधार बनाकर ही मानव जीवन को श्रेष्ठ बनाया जा सकता है। मूल्य आधारित शिक्षा पर संसदीय समिति की इन अनुशंषाओं पर ध्यान देना आवश्यक है। सत्य, सर्वग्राह्य व्यवहार, शांति, प्रेम, अहिंसा भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्यों में प्रमुख है, जो हमारी मूल्य आधारित शिक्षा व्यवस्था का आधार बन सकते हैं। ये पाँचों वास्तव में ऐसे विश्वव्यापी सामाजिक मूल्य हैं, जो मानवीय जीवन के पाँच प्रमुख क्षेत्रों- बौद्धिक, शारीरिक, भावात्मक, मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक पक्ष को सुदृढ करते हैं। इन्हीं से मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है। ये पाँचों शाश्वत मूल्य शिक्षा के पाँच मूल उद्देश्यों- ज्ञान, कौशल, सन्तुलन, दूरदृष्टि एवं पहचान की पूर्ति कर सकते हैं। इन्हें शिक्षा व्यवस्था का आधार बनाया जाना चाहिये। ये सभी प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक प्रभावी बनाये जाने चाहिये। शिक्षक समुदाय इसका दायित्व को निभाने हेतु सर्वथा योग्य है। आज के शिक्षक का दायित्व है कि वह भारतीय संस्कृति के शाश्वत जीवन मूल्यों का वाहक बन कर राष्ट्र निर्माण, समाज निर्माण, मनुष्य निर्माण तथा मनुष्य के चरित्र निर्माण में पुनीत योग दें।❑

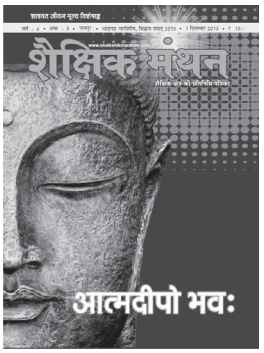

भारतीय दर्शन कहता है कि हम शरीर, प्राण, मन, बुद्धि या चित्त नहीं है। हम आत्मा हैं और आत्मरूप में हम अजर, अमर हैं। इस बात का स्मरण नहीं रहने से ही हम सब के सब ओछी बातों में फंस जाते हैं और संकट में पड जाते हैं। साथ ही हमारे शास्त्र कहते हैं कि परमात्मा की यह सृष्टि भी आत्मस्वरूप ही है । शास्त्र के दो वचन बहुत प्रसिद्ध हैं । एक है, 'अहम ब्रह्मास्मि' और दूसरा है 'सर्वं खलु इदं ब्रह्म'। सचराचर में परमात्मा का वास है इसलिए सजीव निर्जीव सभी से हमारा व्यवहार आत्मीयता का होना चाहिए।

अहं ब्रह्मास्मि से उपजी संस्कृति

❑ **इन्दुमति काटदरे**

परमात्मा की सृष्टि में मनुष्य सबसे श्रेष्ठ है। वह परमात्मा का प्रतिरूप है। मनुष्य के जीवन की भी कुछ विशेषतायें होती हैं । एक ओर तो वह प्रकृति के नियंत्रण में रहता है। प्रकृति के ही कारण से उसे भूख लगती है, नींद आती है, कामप्रवृत्ति होती है । प्रकृति के कारण से ही उसमें जिजीविषा उत्पन्न होती है। प्रकृति के नियमों के अनुसार उसका स्वास्थ्य बनता है। प्रकृति के नियमों के अनुसार ही जन्म और मृत्यु होते हैं।

सृष्टि के हर प्राणी के साथ ऐसा ही होता है। परंतु मनुष्य की बात कुछ विशेष है। मनुष्य को स्वतंत्र इच्छा शक्ति मिली है। मनुष्य को विचारशक्ति, भावनाशक्ति और बुद्धि मिली है। उसे निर्माण करने की शक्ति मिली है। सृजनशक्ति भी मिली है। इन सभी विशेषताओं के कारण मनुष्य प्रतिसृष्टि भी निर्माण करता है। अपनी बुद्धि का उपयोग कर वह विभिन्न शास्त्रों की रचना करता है, विभिन्न व्यवस्थाएं निर्माण करता है। उसकी पंचेंद्रियों और मन के कारण से मनुष्य का बहुत बड़ा संसार निर्माण हुआ है। मनुष्य की सौन्दर्यबोध की शक्ति के कारण भी अनेक प्रकार की कला कारीगरियों का विकास हुआ है और उसके परिणामस्वरूप अनेक उद्योग और अनेक गतिविधियों की रचना हुई है। यह सारी मनुष्य की सृष्टि है।

मनुष्य की इस सृष्टि का संचालन करने वाले तत्त्व हैं मन, बुद्धि और चित्त। इनमें जब बुद्धि नियंत्रक होती है तब सब सुव्यवस्था होती है परंतु जब मन नियंत्रक बनता है तब बहुत सारी समस्याएँ निर्माण होती हैं क्योंकि राग, द्वेष, लोभ, मोह, वासना, लोलुपता, स्वार्थ जैसे भाव व्यवस्था को बिगाड़ देते हैं और अनेक समस्याओं को जन्म देते हैं । मनुष्य की जीवन दृष्टि और विश्व दृष्टि जब जड़वादी और भोगवादी होती है तब ये सारी समस्याएँ निर्माण होती हैं। जब उसकी जीवनदृष्टि और विश्वदृष्टि आत्मवादी होती है तब ये समस्याएँ पहले तो निर्माण ही नहीं होती, और यदि हुई हैं तो दूर होती हैं। भारत की जीवनदृष्टि और विश्वदृष्टि आत्मवादी रही है। इसका विस्मरण होने के कारण से आज हमें जीवन व्यवहार के क्षेत्र में अनेक समस्याएँ दिखाई दे रही हैं। इन्हें दूर करने के लिए हमें भारतीय जीवनदृष्टि के प्रकाश में ही विचार करना होगा ।

मनुष्य के जीवन के जो शाश्वत निर्देशक तत्त्व होते हैं उन्हें ही जीवन मूल्य कहते हैं । इनका ही हम यहाँ विचार कर रहे हैं ।

सबसे पहला तत्व है स्वतन्त्रता। मनुष्य स्वभाव से ही स्वातंत्रप्रिय है। परमात्मा स्वयं स्वतंत्र है इसलिए मनुष्य भी स्वतंत्र बनना और रहना चाहता है। परंतु स्वतन्त्रता का अर्थ ठीक से समझ लेना चाहिए। अधिकांश हम स्वच्छंदता को ही स्वतन्त्रता कहते हैं। परंतु स्वच्छंदता स्वतन्त्रता नहीं है। तो फिर स्वतन्त्रता क्या है? और मनुष्य गुलाम कैसे है ?

सबसे पहले तो मनुष्य अपने आप में स्वतंत्र नहीं होता है। मनुष्य अपनी इंद्रियों का गुलाम होता है। इंद्रियाँ उसे विषयों के पीछे खींचकर ले जाती हैं। मन इंद्रियों के पीछे चला जाता है। बुद्धि अवश हो जाती है अर्थात मन के वश में हो जाती है। मन निरंकुश होते ही अनाचार फैलता है। इसके चलते मनुष्य स्वयं परेशान होता है, दुखी होता है और दूसरों को करता है। इसलिए प्रथम आवश्यकता है इंद्रियों और मन को वश में करने की। इसे ही संयम कहते हैं । मन को विभिन्न प्रकार से वश में करने हेतु पातंजल योगसूत्र में प्रथम दो अंग बताए हैं। ये दो अंग हैं यम और नियम । यम पाँच प्रकार के और नियम पाँच प्रकार के होते हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह पाँच यम हैं और शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान ये पाँच नियम हैं। पाँच यामोन को पतंजलि सार्वभौम महाव्रत कहते हैं। इसका अर्थ है ये स्थान और समय से निरपेक्ष शाश्वत जीवन मूल्य हैं। इन दस के पालन के बिना मनुष्य को सुख, आनंद या शांति प्राप्त होते नहीं है। सामाजिक जीवन में सुरक्षा, समृद्धि, संस्कार, स्नेह आदि नहीं रहते हैं। संस्कृति का विकास नहीं होता है ।

अहिंसा, सत्य आदि किसे कहते हैं यह तो हम जानते हैं। समस्या नहीं जानने की नहीं

है। समस्या संयम के अभाव की और स्वार्थ की होती है। स्वार्थ का जनक निरंकुश मन होता है। इसलिए मन की शिक्षा की व्यवस्था करना ही मुख्य बात है।

दूसरा शाश्वत मूल्य है अपने आप को आत्मा के रूप में पहचानना। भारतीय दर्शन कहता है कि हम शरीर, प्राण, मन, बुद्धि या चित्त नहीं है। हम आत्मा हैं और आत्मरूप में हम अजर, अमर हैं। इस बात का स्मरण नहीं रहने से ही हम सब के सब ओछी बातों में फंस जाते हैं और संकट में पड जाते हैं। साथ ही हमारे शास्त्र कहते हैं कि परमात्मा की यह सृष्टि भी आत्मस्वरूप ही है । शास्त्र के दो वचन बहुत प्रसिद्ध हैं । एक है, 'अहम ब्रह्मास्मि' और दूसरा है 'सर्वं खलु इदं ब्रह्म'। सचराचर में परमात्मा का वास है इसलिए सजीव निर्जीव सभी से हमारा व्यवहार आत्मीयता का होना चाहिए। उदाहरण के लिए वृक्षवनस्पति, पशुपक्षी, प्राणी, भूमि, जल आदि पंचमहाभूत सब परमात्मा का ही व्यक्त रूप है। इसलिए इनके साथ प्रेम का व्यवहार होना चाहिए। मनुष्य इन सबसे श्रेष्ठ है इसलिए उनके प्रति सुरक्षा का भाव भी होना चाहिए। थोड़ा सा ही विचार करके देखेंगे तो ध्यान में आता है कि पंचमहाभूतों का, प्राणियों का, वनस्पति का जीवन मनुष्य के बिना संभव है, प्रकृति ही उनका जीवन चलाती है परंतु इन सबके बिना मनुष्य का जीवन संभव नहीं है । मनुष्य इन सब पर निर्भर है । इसलिए उनके प्रति कृतज्ञता का भाव होना चाहिए। अर्थात आत्मीयता, प्रेम, कृतज्ञता सम्पूर्ण सृष्टि को स्वस्थ रखने हेतु आवश्यक ऐसे मूल्य हुए।

आस्था, श्रद्धा, विश्वास ये तीसरा आवश्यक मूल्य है। आज हम देख सकते हैं कि हमारे आपसी सम्बन्धों में इन बातों का आत्यंतिक अभाव दिखाई देता है । हमारा सम्पूर्ण व्यवहार और हमारी सारी की सारी सामाजिक व्यवस्थाएं अनास्था, अश्रद्धा और अविश्वास पर आधारित होते हैं । हम समझते हैं कि बंधन, नियंत्रण या नियम नहीं होंगे तो कोई अच्छा व्यवहार करेगा ही नहीं। स्वार्थ नहीं होगा या किसी प्रकार का लाभ नहीं होगा तो कोई किसी को पूछेगा नहीं। ऐसा अश्रद्धावान समाज विकास नहीं कर सकता, कभी सुसंस्कृत नहीं हो सकता। इसलिए हमें लोगों के अंत: करणों में श्रद्धा और आस्था जागृत करनी चाहिए।

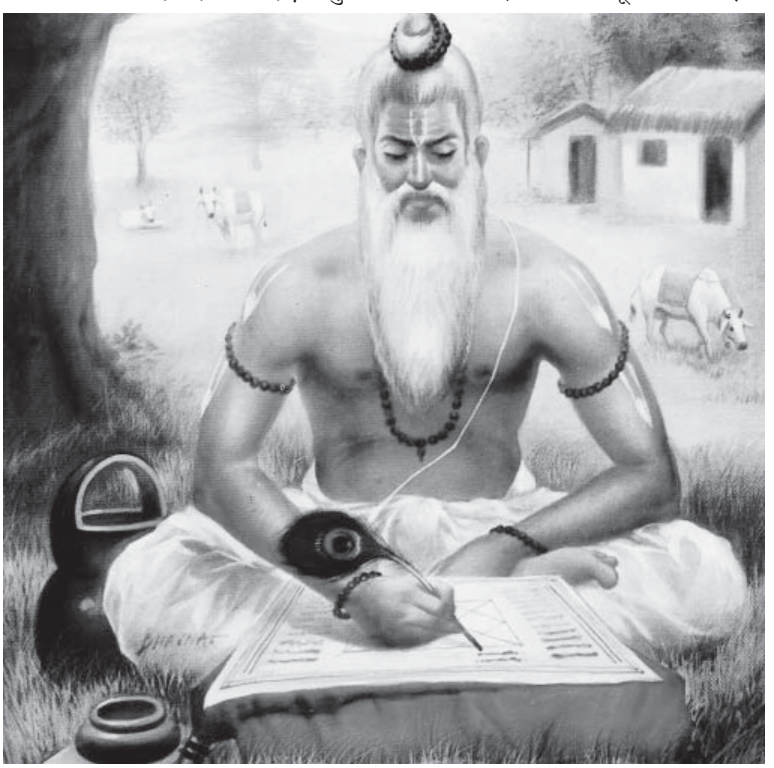

त्याग और सेवा यह चौथा शाश्वत मूल्य है। त्याग और सेवा ये प्रेम के ही व्यावहारिक रूप हैं। दूसरों के हित और सुख के लिए अपना सुख छोड़ना त्याग है और किसी के लिए किसी भी प्रकार की अपेक्षा के बिना सहायता के लिए प्रस्तुत रहना सेवा है । भारत की संस्कृति और समृद्धि हमारे पूर्वज ऋषिमुनियों के त्याग और तपश्चर्या के कारण ही है यह हमेशा स्मरण में रखना चाहिए। इसलिए हमें हमारे व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में त्याग और सेवा के तत्त्व को अनुस्यूत करने की योजना करनी चाहिए ।

इन सभी मूल्यों से अच्छाई पनपती है। अच्छाई से ही दुनिया चलती है। अच्छाई से ही सुख और समृद्धि बढ़ते हैं । इससे ही आनंद और शांति फैलते हैं। इसी में मानवता होती है। ये सब आधारभूत बातें हैं। इन्हें शिक्षा के क्रम में लाने का प्रयास करना चाहिए। शिक्षा क्षेत्र की यह एक महत्वपूर्ण चुनौती है। परंतु यह केवल शिक्षा क्षेत्र का ही प्रश्न नहीं है। इन मूल्यों के विकास हेतु महत्व पूर्ण स्थान है घर और प्रमुख दायित्व है मातापिता का। इन मूल्यों के संस्कार होने चाहिए। संस्कार घर में होते हैं। संस्कार छोटी आयु में होते हैं। घर के चौबीस घंटों के व्यवहार और वातावरण के माध्यम से होते हैं। इसलिए घर के वातावरण और व्यवहार की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार घर और विद्यालय मिलकर आत्मवादी जीवनदृष्टि और विश्व दृष्टि, प्रेम, आत्मीयता, त्याग, सेवा, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, शुचिता, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर में श्रद्धा आदि मूल्यों को व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में प्रतिष्ठित करने के लिए सुविचारित योजना और योजना के अनुसार प्रयास करने की आवश्यकता है। ❑

(निदेशिका-पूनरूत्थान विद्यापीठ, कर्णावती)

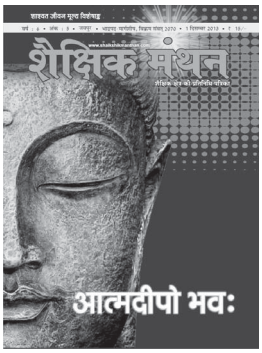

कुछ स्थापनाएँ जैसे-जैसी करनी वैसी भरनी, लोभ महापाप है, पुण्य सभी सुखों की खान है, पाप कर्म शुभ का उदय नहीं होने देते, भोग से तृप्ति नहीं होती, कामी को भय और लज्जा नहीं होती, गुणियों का संसर्ग गुण देता है, शील परम भूषण है, दृश्यमान जगत क्षणभंगुर है, सत्संगति सर्वोत्तम सुख है, बड़ों को क्षमा करनी ही चाहिए, स्वस्थ शरीर धर्म का साधन है, कर्म भाग्य को परिवर्तित करता है, उद्यम के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होता, स्वयं की प्रशंसा और परनिन्दा त्याज्य है, श्रेष्ठ जन न्याय के पद से विचलित नहीं होते, पुण्यात्मा विजय को प्राप्त करता है, संकल्प की पूर्ति प्रयत्न पूर्वक होनी चाहिए।

शाश्वत जीवन में स्थापित सांस्कृतिक मूल्य

❑ डॉ. नन्द किशोर पाण्डेय

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है। प्राचीन काल से ही वह निरंतर अपनी उन्नति के लिए चिन्तन करता आ रहा है। इस चिंतन के क्रम में अधिकांश लोगों ने भौतिक समृद्धि को विकास का मानक स्वीकार किया। भारतीय मनीषा मात्र भौतिक उन्नति से संतुष्ट नहीं होती। भारतीय ऋषि ने जब भी ईश्वर से कुछ कामना की तो अभ्युदय और नि:श्रेयस् दोनों को ही चाहा। अपनी भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही प्रकार ही उन्नति। कभी भी इस देश ने मूल्य रहित विकास को स्वीकार नहीं किया। प्रत्येक शास्त्र सीधे-सीधे या प्रकरान्तर से मूल्यों की चर्चा करता है। मूल्य मनुष्य के जीवन से अविच्छिन्न रूप से सम्पकृत होते हैं। यह हमारे दैनन्दिन कर्मों को प्रभावित करते हैं। मूल्यों से विरहित होकर व्यष्टि या समष्टि कोई भी जीवित नहीं रह सकता। मूल्य वायवीय पदार्थ नहीं हैं। जीवन में इनकी निर्णायक भूमिका होती है। दैनन्दिन जीवन का निर्णय जाने-अनजाने किसी भी प्रकार से किया गया हो वह कतिपय मूल्यों से प्रभावित होता है।

विचार का विषय यह है कि मूल्यों की मूल्यकता या सार्थकता का निर्णय किस प्रकार से हो। भारतीय शास्त्रों ने धर्म को शाश्वत जीवन मूल्य के रूप में स्थापित किया है। जो धारण करने योग है वह धर्म है। धर्म में लक्ष्णों में- धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शौर्य, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और अक्रोध को लक्षण बताया गया है। परंपरा इसे शाश्वत जीवन मूल्य के रूप में स्वीकार करती आयी है। इन दस लक्षणों में भी सत्य और अहिंसा को वरीयता मिली। सत्य और अहिंसा को बुद्ध ने अपने जीवन और धर्म का आदर्श बनाया। आधुनिक काल में महात्मा गाँधी ने सत्य और अहिंसा को भारतीय चिंतन परंपरा से ग्रहण कर न केवल मूल्य के रूप में अपितु जीवन का अनिवार्य अंग बनाकर जीवन जीने की कला के अविभाज्य अंग के रूप में स्थापित किया। उपनिषद का मंत्र 'सत्यमेव जयते' स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय प्रतीक में आदर्श वाक्य के रूप में स्थापित हुआ। विवेकानन्द ने कुमारी मेरी हेल को लिखित एक पत्र में कहा- 'सौंदर्य और यौवन का नाश हो जाता है, जीवन और धन का नाश हो जाता है, नाम और यश का भी नाश हो जाता है, पर्वत भी चूर-चूर होकर मिट्टी हो जाते हैं, मित्रता और प्रेम भी नश्वर है, एक मात्र सत्य ही चिर स्थायी है।' यह 'सत्य' अनेक शास्त्रों में अनेकानेक रूप से परिभाषित है। कई बार अलग-अलग परिस्थितियों में असत्य को सत्य से बड़ा बताया गया है। भारतीय मन यह स्वीकार कर चुका है कि सत्य पराजित नहीं होता। ईश्वर भी सत्य है। ईश्वर का नाम भी सत्य है। सत्य शाश्वत जीवन मूल्य है। 'अहिंसा परमो धर्म:' कहकर इसे शाश्वत जीवन मूल्य के रूप में प्रतिस्थापित किया गया है। पुण्य परोपकार के बिना नहीं हो सकता। पुण्य भी शाश्वत जीवन मूल्य है। इसकी चाह रखने वाले को परोपकार करना ही चाहिए। परपीड़न है तो पाप है। ऐसे में परोपकार का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। प्रसिद्ध सूक्ति है-

'अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनं द्वयम्।
परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीड़नम्।।'

त्याग और तितिक्षा के बिना परोपकार संभव नहीं है। त्याग के कई कारण हैं। जीवन के चरम साध्य के लिए त्याग चाहिए। सामाजिक सद्भाव त्याग से होता है। अभिलक्षित पदार्थ की प्राप्ति के लिए त्याग और प्राप्य के प्राप्त हो जाने पर उसका त्याग और भी बड़ा त्याग है। त्याग और ग्रहण दोनों ही मूल्य हैं। किसका त्याग, किसका ग्रहण, कितना त्याग कितना ग्रहण यह विचार का विषय है।

मनुष्य का मन बंधन और मोक्ष का कारण है। इसलिये मन को निर्विषय बनाना चाहिये। वासना युक्त मन बाँधता है। वासना संसार का कारण भी है। संसार में रहते हुए विदेह होकर जीना आध्यात्मिक स्तर पर मूल्य है। वासना लौकिक जीवन में मूल्य है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की

प्राप्ति को धर्मशास्त्र और साहित्य दोनों ही जीवन मूल्य मानते हैं। अर्थ और काम, धर्म और मोक्ष से संपुटित हैं। अर्थोपार्जन कामनाओं की पूर्ति के लिये नहीं अपितु जीवन-यापन के लिये आवश्यक माना गया है। जीवन के लिये 'काम' आवश्यक है।

मूल्य विचार में इसकी उपेक्षा नहीं हो सकती। कवियों, साहित्यकारों के लिये स्वाभीमानहीनता को बुरा माना गया है। स्वाभीमान विरहित होकर कार्य करने को निन्दनीय कहा गया है। ऐसी स्थिति में स्वाभीमान मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित होता है। भारतीय परंपरा में गुरु या आचार्य देवता के रूप में प्रतिष्ठित है। उपनिषद् वाक्य है- 'आचार्य देवो भवः'। आचार्य और गुरु को प्रतिष्ठा देना शाश्वत जीवन मूल्य है। व्यावहारिक जीवन में माता-पिता की सेवा, अतिथि का सत्कार, त्यागपूर्वक भोग, गृहस्थाश्रम में पातिव्रत्य, यज्ञ-अनुष्ठान, गृह लक्ष्मी के रूप में पत्नी की मान्यता देवी रूप में बालिकाओं की प्रतिष्ठा, स्वामी सेवक भाव में निष्कपटता, सुख-दुःख, जय-पराजय, हानि-लाभ, जीवन-मरण सबको ईश्वरार्पित कर विचार करना जीवन-मूल्य है। विश्व-बंधुत्व की भावना भारतीय विचार है। भारतीय ऋषियों ने विश्व की कल्पना एक 'नीड़' (घोंसला) के रूप में की। विश्व में कहीं से भी आने वाले विचारों के लिये स्वागत का भाव प्रकट किया। सबके कल्याण का भाव भारतीय जीवन-मूल्यों की आधारशिला है। विश्व का कोई धर्म शायद ही कहीं सबके कल्याण की बात करता हो। प्रसिद्ध श्लोक है-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत्।।

ब्रह्मचर्य जीवन-मूल्य के रूप में स्थापित है। यह समस्त प्रकार के व्यभिचारों का शमन करता है। अपरिग्रह शाश्वत जीवन-मूल्य के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। कोई देश चाहे जितना समृद्ध हो जाए अपरिग्रह न होने से वहाँ की जनता बुभुश्रित ही रहती है। परिग्रह मैल की तरह जमा होकर तेज और पुण्य को नष्ट करता है। धन संग्रह वस्तुतः दान के लिए है। इसलिये दान शाश्वत मूल्य है। भारत की प्राचीन कथाएँ दान दाताओं की कथाओं से भरी पड़ी है। इस देश में समर वीर से कम महत्त्व पूर्ण दानवीर नहीं होता। दया, क्षमा, सौजन्य, निरअभिमानिता, ऋजुता तथा निर्लोभ को भी मूल्यों के अन्तर्गत परिगणित किया गया है। इनमें से एक-एक विषय को लेकर शास्त्र लिखे गये हैं।

भारतीय संस्कृति केवल मनुष्य केन्द्रित विचार नहीं करती। मनुष्य सुखी और समृद्ध हो इसकी कामना तो है लेकिन प्रकृति के कीमत पर नहीं। पर्यावरण की रक्षा मूलतः भारतीय विचार है। इसलिये सम्पूर्ण प्रकृति की रक्षा शाश्वत जीवन मूल्य है। तभी तो भरत की माँ शकुन्तला पौधों को पानी पिलाने के पहले जल ग्रहण नहीं करती। जीव मात्र की रक्षा के लिए भारतीय

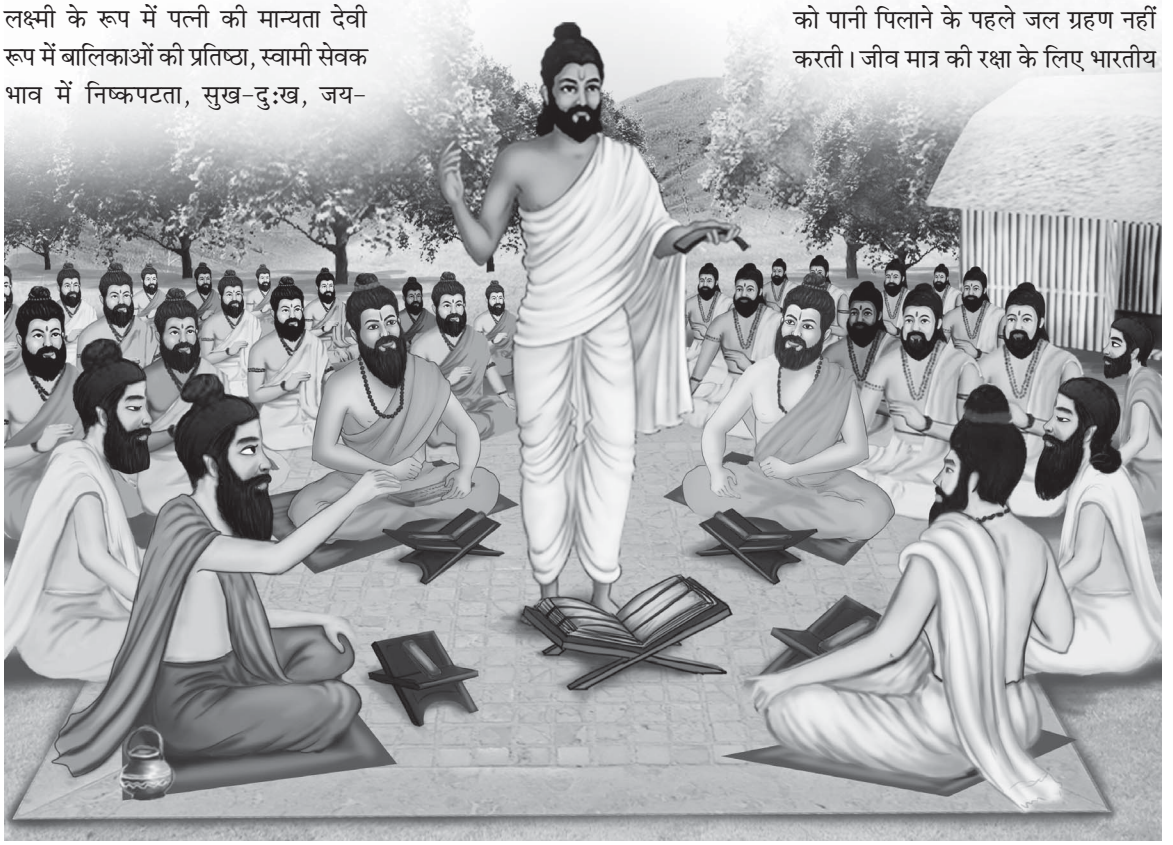

संस्कृति मूल्यों की व्यवस्था करती है। शौर्य और क्षमा जीवन के आवश्यक तत्त्व हैं। शौर्य विहीन व्यक्ति और राष्ट्र जीवित ही नहीं रह सकते। वही शौर्यवान के लिये क्षमा को आभूषण माना गया है। शौर्य के कारण ही सिंह वन का राजा होता है। सेवा को भारतीय परंपरा सदा ही प्रतिष्ठा देती रही है। सेवक के धर्म को बड़ा कठिन कहा गया है। सृष्टि में सेवा की आवश्यकता पड़ती ही है। भक्ति में सेवक-सेव्य भाव को उत्तम माना गया है। धनार्जन की सार्थकता सेवा में है। स्वास्थ्य की सार्थकता सेवा में है। आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि सेवा से होती है। अत: इन्हें सेवा को ही समर्पित होना चाहिए। विद्या विरहित जीवन निरर्थक है। 'विद्ययाऽमृतमश्नुते' विद्या से ही मनुष्य अमरता को प्राप्त करता है। यश का लाभ प्राप्त करता है। विद्या विनय देती है। सुपात्र बनाती है। सुपात्र धन को अर्जित करता है। धन धर्म देता है। उससे सुख की प्राप्ति होती है। विद्या और विनय से संपन्न व्यक्ति का गुणगान भारतीय संस्कृति में सर्वत्र किया गया है। शाश्वत मूल्यों की चर्चा इनके बिना नहीं की जा सकती। जैसे गुण मूल्य के रूप में स्थापित हैं उसी तरह दोषों से मुक्ति भी मूल्य है। आलस्य, दीर्घसूत्रता, अतिनिद्रा, तन्द्रा, भयातुरता, अक्रोध, मद्य-मांस और द्यूत-क्रीडा से मुक्ति भी मूल्य के रूप में स्थापित है। औषध ज्ञान, मन्त्र ज्ञान, मन्त्र तथा देव-स्तुति का ज्ञान उपलब्ध है। इसलिये यह मूल्य के रूप में स्थापित है। कुछ स्थापनाएँ जैसे-जैसी करनी वैसी भरनी, लोभ महापाप है, पुण्य सभी सुखों की खान है, पाप कर्म शुभ का उदय नहीं होने देते, भोग से तृप्ति नहीं होती, कामी को भय और लज्जा नहीं होती, गुणियों का संसर्ग गुण देता है, शील परम भूषण है, दृश्यमान जगत क्षणभंगुर है, सत्संगति सर्वोत्तम सुख है, बड़ों को क्षमा करनी ही चाहिए, स्वस्थ शरीर धर्म का साधन है, कर्म भाग्य को परिवर्तित

भारतीय जीवन मूल्य अध्यात्म से परिपोषित है। मनुष्य को देवता बनानी वाली भारतीय संस्कृति में मूल्य चिन्तन निरन्तर होता आया है। इस चिन्तन-परम्परा से निःसृत हैं- शाश्वत जीवन मूल्य। उनका बोध, चिन्तन तथा अनुपालन ही भारत की महानता तथा गौरव प्रदान करता आया है। कल जब भारत पुनः विश्वगुरु के आसन पर प्रतिष्ठित होगा तो इन्हीं मूल्यों के बल पर।

करता है, उद्यम के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होता, स्वयं की प्रशंसा और परनिन्दा त्याज्य है, श्रेष्ठ जन न्याय के पद से विचलित नहीं होते, पुण्यात्मा विजय को प्राप्त करता है, संकल्प की पूर्ति प्रयत्न पूर्वक होनी चाहिए। यह ऐसे शाश्वत मूल्य हैं जिन्होंने मनुष्यों के जीवन को मानवीयता में परिवर्तित किया है। वचन की प्रामाणिकता व्यक्तित्व का द्योतन करती है, विद्वान पूज्य है, मित और हित भाषण करना चाहिए, शीलवान्, तिरस्कृत न हो, दुष्ट नष्ट होना चाहिए, मित्रता का निर्वाह होना चाहिए। आदि भारतीय परम्परा के मूल्य के रूप में स्थापित है। आश्रित की चिन्ता, कृतज्ञता का पालन, यथा समय मौन-व्रत, यथा शक्तिदान भी शाश्वत जीवन मूल्य है। भारतीय संदर्भ में स्नान, ध्यान, योग-व्यायाम, जप, होम, श्राद्ध और गो-पालन शाश्वत जीवन-मूल्य के रूप में स्थापित है। मातृ-पितृ तथा देव ऋण से मुक्ति का प्रयास जीवन मूल्य है। इसलिये ज्ञान-दान को परम दान के रूप में स्थापित किया गया है। प्रवृति और निवृति दोनों शाश्वत है। अनाशक्त भाव से जीवन जीना जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही महत्त्वपूर्ण है प्रवृत्ति पूर्वक जीना। प्रारब्ध भौतिक जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है इसलिये उसकी सार्थकता को स्वीकार किया जाता है। इसका अर्थ यह नहीं की पुरुषार्थ की सात्वतता विलोपित कर दी गयी है। अलग-अलग पद, कार्य व्यवहार तथा आश्रय एवं वर्ण के अनुसार भी जीवन-मूल्य निर्धारित किये गये हैं। शुभ कर्मों को करना जहाँ जीवन मूल्य है वहीं उसके सातत्य को और भी बड़ा मूल्य माना गया है। विद्या को प्राप्त करना जीवन की सफलता है वहीं सतत् विद्या का अभ्यास उससे भी बड़ी सफलता है। जीवन को जो भी शुभ और कल्याणप्रद बनाता है उसकी परिगणना मूल्यों के अन्तर्गत की गयी है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन मानवतावाद की चर्चा करते हुए आध्यात्मिक एकता को स्थापित करते हैं, 'सच्चा मानवतावाद हमें बताता है कि हमें मनुष्य में साधारण अवस्था में जो कुछ प्रत्यक्ष दिखायी देता है, उससे भी कुछ अधिक श्रेष्ठ तत्त्व उसमें है जो उसके विचार तथा आदर्श का निर्माण करता है। उसमें एक श्रेष्ठ आत्मा का निवास है जो उसे भौतिक वस्तुओं, जिनसे उसकी संतुष्टि नहीं होती, विमुख करता है। वास्तव में मानव कल्याण और सार्वभौमिक कल्याण के लिये आध्यात्मिक एकता की उपेक्षा और धार्मिक-अनुभूति को अस्वीकार करना दार्शनिक दृष्टि से अनुचित है, नैतिक विचार से असुरक्षित तथा सामाजिक दृष्टि से भयंकर है। जहाँ ईश्वरीय भावना है वहाँ एकता और समता है।'

भारतीय जीवन मूल्य अध्यात्म से परिपोषित है। मनुष्य को देवता बनानी वाली भारतीय संस्कृति में मूल्य चिन्तन निरन्तर होता आया है। इस चिन्तन-परम्परा से निःसृत हैं- शाश्वत जीवन मूल्य। उनका बोध, चिन्तन तथा अनुपालन ही भारत की महानता तथा गौरव प्रदान करता आया है। कल जब भारत पुनः विश्वगुरु के आसन पर प्रतिष्ठित होगा तो इन्हीं मूल्यों के बल पर। ❑

(प्रोफेसर, हिन्दी विभागाध्यक्ष, राज. वि.वि.)

केशव विद्यापीठ समिति

जामडोली, जयपुर, राजस्थान, टेलीफोन न : 0141-2680344, 719

Email Id - rps_alw@yahoo.com, web site - www.keshavvidyapeeth.com

25 वर्षो से शिक्षा - सेवा के माध्यम से शाश्वत जीवन मूल्यों द्वारा व्यक्ति निर्माण हेतु समर्पित संस्थान केशव विद्यापीठ की स्थापना राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के आद्य सरसंघचालक डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार की पुण्य स्मृति में उनकी जन्मशती के अवसर पर 18 मार्च 1988 को जयपुर से 10 कि.मी दूर की गई। हमारा लक्ष्य शिक्षा के माध्यम से शाश्वत मूल्यों की स्थापना कर युवा पीढ़ी को आत्मनिर्भर बनाना एवं समाज, राष्ट्र कार्य हेतु प्रेरित करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विभिन्न संस्थानों का संचालन हो रहा है। केन्द्रीय समिति के मार्गदर्शन में विभिन्न संस्थानों की प्रबन्ध समितियाँ अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु प्रयासरत हैं।

केशव विद्यापीठ जामडोली, जयपुर, कार्यकारिणी समिति (2012-2015)

संरक्षक	:	श्री रामलक्ष्मण गुप्ता, श्री राधेश्याम धूत	अध्यक्ष	:	डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
सचिव	:	इ.राजेन्द्र प्रसाद शर्मा	उपाध्यक्ष	:	श्री ज्ञानचन्द्र अग्रवाल
कोषाध्यक्ष	:	सीए. अशोक ताम्बी	उपसचिव	:	श्री देवेन्द्र कुमार शर्मा
सदस्य	:	श्री वीरु सिंह राठौड़, श्री शंकरलाल अग्रवाल, श्रीमती आशा गोलचा			
सहवरित सदस्य	:	श्री राजदीपक रस्तौगी, श्री अशोक डीडवानिया, श्री सुरेश उपाध्याय, श्री अनन्त ताम्बी			
पदेन सदस्य	:	श्री शिव प्रसाद, श्री भरतराम कुम्हार, श्री बनवारीलाल नाटिया, श्री अमरनाथ चंगोत्रा			
स्थाई आमंत्रित	:	श्री दुर्गादास जी, श्री प्रकाश चन्द्र जी, श्री शिवलहरी जी, श्री रामप्रसाद जी एवं केशव विद्यापीठ समिति द्वारा संचालित विभिन्न संस्थाओं के अध्यक्ष, मंत्री, विश्वविद्यालय प्रतिनिधि, जिला शिक्षा अधिकारी, जयपुर			

शंकरलाल धानुका उच्च माध्यमिक आदर्श विद्या मन्दिर ☎ 2680932

अध्यक्ष : श्री सुरेश उपाध्याय — **मंत्री : श्री विश्वम्भर दयाल शर्मा**

कक्षा 6 से 12 तक विज्ञान एवं वाणिज्य संकाय का पूर्ण आवासीय विद्यालय जहाँ गुरुकुल पद्धति पर आधारित आधुनिक शिक्षा एवं संस्कारयुक्त स्वस्थ वातावरण द्वारा बालक का सम्पूर्ण विकास किया जाता है। ज्ञान कौशल, शारीरिक दक्षता, भाषा, कला, केरियर मार्गदर्शन द्वारा बालक को विश्वस्तरीय स्पर्धा के योग्य बनाया जाता है। प्रतियोगी परीक्षा हेतु तैयारी की व्यवस्था है।

दामोदर दास डालमिया उच्च माध्यमिक आदर्श विद्या मन्दिर ☎: 2680439

अध्यक्ष : श्री रामावतार वैद्य — आधुनिक शिशुवाटिका से कक्षा 12वीं तक का अनिवासीय विद्यालय — **मंत्री : श्री देवेन्द्र कुमार शर्मा**

ब्रह्मचारी श्री रामानुजाचार्य कन्या उच्च माध्यमिक विद्यालय ☎: 2680455

अध्यक्ष : डॉ. शक्तिपूर्णा गुप्ता — कक्षा 3 से 12 तक कला, वाणिज्य संकाय का श्रेष्ठ कन्या विद्यालय — **मंत्री : श्रीमती सीमा जुल्का**

श्री गौरीशंकर बिहाणी महिला महाविद्यालय ☎: 2680961

अध्यक्ष : डॉ. नन्द किशोर पाण्डे — महिला उच्च शिक्षा का श्रेष्ठ संस्थान — **मंत्री : श्री अजय गोयल**

देवीदत्त डालमिया शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय ☎: 2680076

अध्यक्ष : श्री गोपाल सैनी — संस्कार युक्त शारीरिक शिक्षा हेतु देश का श्रेष्ठ संस्थान — **मंत्री : श्री प्रकाश नारायण पारीक**

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय सी.टी.ई. ☎: 2680466
श्री अग्रसेन शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय

अध्यक्ष : श्रीमती आशा गोलचा — श्रेष्ठ शिक्षक निर्माण एवं शोध कार्य में देश का प्रमुख संस्थान — **मंत्री : श्री जगदीश प्रसाद सिंघल**

भगवानलाल रामलाल रावत इण्डोस्विस चैरिटेबल ट्रस्ट अस्पताल ☎: 2680209

अध्यक्ष : डॉ. एस.बी. झँवर — नर सेवा-नारायण सेवा के भाव से सेवारत — **मंत्री : डॉ. गिरधर गोयल**

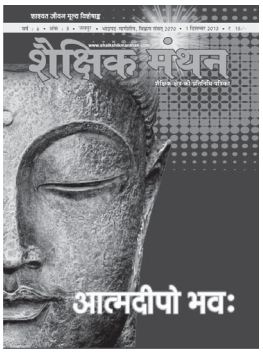

जीवन मूल्यों के क्षरण की चुनौती

❑ प्रो. सीताराम व्यास

मानव-जीवन को महत्त्वपूर्ण और मूल्यवान बनाने वाले जीवन-मूल्यों का उद्‌भव और विकास धर्म की सत्प्रेरणा से ही सम्भव होता है। मानव को कुमति से सुमति और दुराचार से सदाचार की ओर अग्रसर करने वाले आदर्शों को ही जीवन-मूल्य कहा जाता है। जीवन-मूल्यों का विकास एक दिन में नहीं होता है। संस्कृति के संस्कारों से निरन्तर पोषित होकर सदियों में जीवन-मूल्य विकसित होते हैं। समाज में समता और ममता का संचार करने वाला उपकरण मूल्य ही हैं। युग परिवर्तनशील है, लेकिन जीवन-मूल्य शाश्वत हैं। सदाचार धर्म है, तो दुराचार अधर्म है। मनु ने धर्म के दस लक्षण बताये हैं। ये वही भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्य हैं :-

'धृतिर्क्षमादमोऽस्तेयं शोचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यम क्रोधो दशकं धर्मलक्षणम।।'

धैर्य, क्षमा, संयम, अस्तेय, शुचिता, इन्द्रियनिग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य एवं अक्रोध ही धर्म के दस लक्षण हैं। व्यक्तिगत जीवन में उच्चत्तर स्थिति को प्राप्त करने के लिए इन सद्‌गुणों का प्राचीन काल में भी महत्व था और वर्तमान युग में तो इनका महत्व और भी बढ़ गया है। इन मूल्यों की महत्ता महापुरुषों के आचार से भी पुष्ट होती रही है। उदाहरण के लिए राजा हरिश्चन्द्र, भगवान श्रीराम, देवव्रत भीष्म, धर्मराज युधिष्ठिर ने कष्ट सहन कर भी सत्य और मर्यादा का मार्ग नहीं छोड़ा।

भारत की मनीषा ने जगत को अभेद की दृष्टि से देखा और अनुभव किया कि जड़-चेतन में एक ईश्वर की सत्ता है। इस दार्शनिक चिन्तनधारा से कालान्तर में मानवीय गुणों का विकास हुआ। स्वामी विवेकानद महान वेदान्ती थे। उन्होंने नर-सेवा, नारायण सेवा का महत्व समझा। उन्होंने कहा कि 'दरिद्रनारायण देवो भव'। यह दिव्य विचार ही जगत में शाश्वत जीवन-मूल्यों का प्रस्फुटन करता है।

राष्ट्र और समाज के उत्थान के लिए कुछ गुणों का होना अत्यावश्यक है। समाज में गुणों का जितना प्राधान्य होगा, उसी परिमाण में वह समाज श्रेष्ठ होगा। दुर्भाग्यवश हमारे राष्ट्र में जीवन मूल्यों का क्षरण दिन-प्रतिदिन होता जा रहा है। यद्यपि गुणों की स्थापना में महापुरुषों का योगदान रहता है, तथापि देश की महानता का मापदण्ड केवल महापुरुषों का जन्म लेना ही नहीं है। वस्तुतः साधारण व्यक्ति का स्तर श्रेष्ठ होने से ही देश महान होता है। यह कार्य केवल प्रचार से नहीं, अपितु जीवन के सभी स्तरों पर सामूहिक प्रयास से सम्भव होता है। शिक्षा और संस्कारों से जीवन-मूल्यों का युगानुकूल परिष्कार होता रहता है।

आज दुर्भाग्यवश हमारे देश ने स्व-जीवन-मूल्यों को विस्मृत कर दिया है और पश्चिम के अन्धानुसरण की प्रवृत्ति ने समाज को अधोगामी स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है। नित्य समाचार-पत्रों में हत्या, लूटमार, व्यभिचार, भ्रष्टाचार के समाचार पढ़ने को मिलते हैं। अधिकतर नगर दुराचार और गन्दगी के आगार बनते जा रहे हैं। जमीन-माफिया कंकरीट के महल बनाकर धरती की हरियाली को समाप्त करके प्रदूषण फैला रहे हैं। ग्रामीण जीवन की शुचिता, सादगी, सरलता को ग्रहण लग गया है। पहले गाँवों में चोरी, अपहरण, बलात्कार की घटनायें किंचित मात्र भी घटित नहीं होती थीं, किन्तु अब प्रतिदिन ऐसी घटनाओं के समाचारों से समाचार-पत्र पटे रहते हैं। समाज का महिला-वर्ग और गरीब तबका न्याय से वंचित है। शासन में भ्रष्टाचार ऊपर से नीचे के स्तर तक दीमक की तरह व्याप्त है। शासक भ्रष्ट, अहंकारी और दुराचारी बन गये हैं। कर्तव्य विमुख राजनेता संवेदनहीन बनकर सत्ता-सुख भोग रहे हैं। न्यायालय में झूठे अभियोग, झूठी साक्षियाँ, झूठे आवेदन, घूसखोरी आदि आम बातें हैं।

सनातन, पारम्परिक जीवन-मूल्यों के अवमूल्यन का मूल कारण है राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना का ह्रास या विनाश। वर्तमान नीतिविहीन राजनीतिज्ञों के छदम धर्मनिरपेक्षता के भीषण काले बादलों ने भारतीय संस्कृति के प्राणदायी सनातन जीवन-मूल्यों के आलोक को आच्छादित कर लिया है। हमारे तथाकथित प्रगतिशील कहलाने वाले विचारकों ने मौलिक और मांगलिक चिन्तन करने की क्षमता को खो दिया है। ऐसी दुरावस्था में भारतीय जीवन-मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए सामूहिक प्रयास

समाज में गुणों का जितना प्राधान्य होगा, उसी परिमाण में वह समाज श्रेष्ठ होगा। दुर्भाग्यवश हमारे राष्ट्र में जीवन मूल्यों का क्षरण दिन-प्रतिदिन होता जा रहा है। यद्यपि गुणों की स्थापना में महापुरुषों का योगदान रहता है, तथापि देश की महानता का मापदण्ड केवल महापुरुषों का जन्म लेना ही नहीं है। वस्तुतः साधारण व्यक्ति का स्तर श्रेष्ठ होने से ही देश महान होता है। यह कार्य केवल प्रचार से नहीं, अपितु जीवन के सभी स्तरों पर सामूहिक प्रयास से सम्भव होता है।

की महती आवश्यकता है। हम सब भारतीय पुनः व्यक्ति-व्यक्ति में राष्ट्र-बोध का विश्वास जगाकर अपने देश को उन्नति के शिखर पर ले जाने का सामूहिक सत्प्रयास करेंगे, तो ईश्वर भी हमारा सहायक सिद्ध होगा। पुनः भारत अस्मिता-बोध के बल पर उठ खड़ा होने की क्षमता रखता है।

जीवन-मूल्यों का जन-जन में संचार करने के लिए निम्नलिखित सोपानों पर व्यावहारिक चिन्तन की आवश्यकता है। पहले सोपान में देश के सभी नागरिक सजगतापूर्वक स्वयं अपने जीवन में सत्य, सेवा, सदाचार आदि अपनायें। सत्य को आचरित करके दिखायें। सभी प्रतिज्ञा करें कि मैं सत्य बोलूंगा और सच्चाई के साथ व्यवहार करूँगा। हमारे पूर्वजों ने अपने व्यावहारिक जीवन में सत्यनिष्ठा के अनूठे उदाहरण प्रस्तुत किये थे। सत्यव्रती राजा हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में दिया वचन सत्य करने हेतु अपना सारा राज्य विश्वामित्र को दान दे डाला, चाण्डाल के घर दासता की, नाना विपदाएँ सहन की, परन्तु सत्य से तनिक भी विचलित नहीं हुए । आज अपने देश के प्रत्येक नागरिक को सत्यवादी हरिश्चन्द्र के सत्य-पथ पर चलने की आवश्यकता है। जब व्यक्ति सत्य-धर्म का आचरण करेंगे, तो समाज में परिवर्तन स्वतः घटित होकर रहेंगे।

मूल्य का दूसरा सोपान परिवार है। यह भारतीय समाज-व्यवस्था का केन्द्र-बिन्दु है। आदर्श परिवार में माता-पिता देव-तुल्य पूजे जाते हैं। श्रवण की मातृ-पितृ भक्ति आज भी अनुकरणीय है। दुर्देव से, हिन्दू-परिवार व्यवस्था टूटने के कगार पर है। अब वृद्ध माता-पिता का स्थान वृद्धाश्रम लेने लगे हैं। इसलिए पुनः कुटुम्ब प्रबोधन की आवश्यकता है। परिवार नागरिक गुणों के विकास और पोषण की पाठशाला है। जहाँ बालक प्रेम, अनुशासन और बड़ों का आदर देने का संस्कार ग्रहण करता है। शिवाजी, प्रताप, विवेकानन्द, महात्मा गाँधी का निर्माण करने वाली उनकी माता थी।

जीवन मूल्यों के संवर्द्धन का तीसरा सोपान समाज-सेवा, देश-भक्ति और राष्ट्र के प्रति उत्सर्ग की कामना है। महाराणा प्रताप वन-वन मारे-मारे फिरते रहे, बच्चों को घास की रोटियाँ खिलायीं, किन्तु पराधीनता को स्वीकार नहीं किया। गुरु गोविन्द सिंह जी ने धर्म रक्षा के लिए अपने पिता और चारों बच्चों को उत्सर्ग कर दिया।

'स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्मो भयावहः'

(अपने धर्म में मर जाना अच्छा है, लेकिन धर्म-परिवर्तन स्वीकार्य नहीं है, क्योंकि यह भयावह है।) अमर शहीद भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु को कौन भुला सकता है, जिन्होंने देश की रक्षा के लिए फाँसी के फन्दे को चूम लिया था। इन बलिदानी देश-भक्तों का चरित्र पाठ्यक्रमों में समायोजित करने की महती आवश्यकता है जिससे बाल-मन में स्वदेशभक्ति के भाव प्रस्फुटित हो सकें। आज देश-भक्ति को आधुनिक सन्दर्भ में परिभाषित करने की आवश्यकता है। अपने स्वदेश की बनी वस्तुओं के प्रति प्रेम तथा विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार ही स्वदेश-भक्ति। स्व-भाषा, स्व-भोजन, स्व-तन्त्र के प्रति आस्था का नाम देश भक्ति है।

चोथा सोपान है विश्व-परिवार की अवधारणा। इस संसार को बनाने वाला भगवान है। सम्पूर्ण जीवन-जगत, जड़-चेतन में परम सत्ता की अभिव्यक्ति है। मैं अंश हूँ, वह अंशी है। केवल भारत का अध्यात्म ही मानव-कल्याण का व्यावहारिक आदर्श प्रस्तुत कर सकता है। भारत का मांगलिक अध्यात्म-चिन्तन सार्वभौम है-

'सर्वे भवन्तु सुखिनः,
सर्वे सन्तु निरामयाः।'
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु,
मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।

ऐसे उदात विचारों का विकास भारत की धरती पर ही सम्भव था।

जीवन-मूल्यों के विकास की अन्तिम परिणति ईश-भक्ति है, जिसमें आस्था, श्रद्धा, समर्पण के भावों का प्रगटीकरण होता है। इसमें द्वैत की परिणति अद्वैत में होती है। इस प्रकार नर से नारायण और नारायण से नर में जीवन-मूल्यों के विकास की प्रक्रिया चलती रहती है। ईश-भक्ति में मेरा-तेरा, परिवार, समाज और राष्ट्र, विश्व एकाकार होते दिखायी देते हैं इससे मानव में समानता, उदारता, करुणा, परोपकार के भावों का स्फुरण होता रहता है।

इन शाश्वत-जीवन मूल्यों को सार्थक बनाने के लिए धर्मानुकूल शिक्षा-प्रणाली की आवश्यकता है। सच्ची शिक्षा से ही संस्कार युक्त व्यक्ति और समाज का निर्माण होता है। एक समय था भारत वर्ष में बहुसंख्यक संस्कारित व्यक्ति रहते थे इसलिए भारत 'जगद्गुरु' कहलाने का गौरव अर्जित कर सका। अब आवश्यकता है हम इन मूल्यों को जीवन में आचरित करके दिखायें और युगानुकूल सशक्त तथा समृद्ध भारत की रचना का संकल्प लें।

जन-मन में हो, मूल्य चेतना का उन्मीलन।
सदाचार से सुरभित हो जन-जन का जीवन।।

इस अखण्ड साधना से ही सदभावी, विकासोन्मुख भारत का निर्माण होगा। ❑

(सेवानिवृत्त प्राध्यापक, रोहतक (हरियाणा))

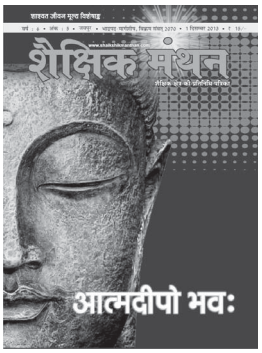

प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक जाति का एक न एक विशिष्ट आदर्श अवश्य होता है- राष्ट्र के समस्त जीवन में संचार करने वाला एक महत्वपूर्ण आदर्श (कह सकते हैं कि वह आदर्श राष्ट्रीय जीवन की रीढ़ होती है। परन्तु भारत का मेरुदंड राजनीति नहीं है, सैन्य शक्ति भी नहीं है, व्यावसायिक आधिपत्य भी नहीं है, और न यांत्रिक शक्ति ही है, वरन् है धर्म। आध्यात्मिकता जिस अनुपात में बढती है, व्यक्ति और समाज उतना ही नैतिक होता जाता है। नैतिकता ही धर्म का मूलाधार है । स्वामी विवेकानंद कहते हैं- स्वाधीनता और स्वतंत्रता की बातें चाहे जितनी अच्छी लगें, पर विनय, नम्रता, भक्ति, श्रद्धा और विश्वास के बिना कोई धर्म नहीं रह सकता।

आध्यात्मिकता से गुंथे जीवन मूल्य

❑ हनुमान सिंह राठौड़

अगर किसी देश को भ्रष्टाचार से मुक्त और सुन्दर मन वाले लोगों का देश बनाना है , तो मेरा दृढ़तापूर्वक मानना है कि समाज के तीन प्रमुख सदस्य ये काम कर सकते हैं- माता, पिता और गुरु।

किन्तु आज अभिभावक बच्चों को कैरियरिस्ट बनाने के साथ-साथ मूल्यहीनता के लिए चिंता प्रकट करने या शिक्षा व्यवस्था को कोसने से आगे नहीं बढ़ते।

धर्मनिरपेक्षता के नाम पर शिक्षा के साथ हुई राजनीति ने हमारे नैतिक मूल्यों के ज्ञान को दिवालिया सा बना दिया है। इसलिए गुरुजन आज असहाय हैं।

सड़क पर खड़े आम आदमी से लेकर सत्ता के शिखर तक चिंता तो सब प्रकट कर रहे हैं , पर उपाय पर मौन हैं । क्यों ? क्योंकि जो अनुभूत उपायों के आख्यान हमारे ग्रंथों में वर्णित हैं , जिसका व्याख्यान ऋषि परम्परा ने किया है, जो सनातन, सार्वभौमिक आचरणीय व वैज्ञानिक है उसे सार्वजनिक बहस में आज कुछ संकीर्ण मानसिकता वाले लोगों ने सांप्रदायिक करार दे दिया है।

इसलिए उस शाश्वत मूल्य अधिष्ठान की ओर लौटना ही होगा, नान्य पन्थाः - अन्य कोई मार्ग नहीं है- वह अधिष्ठान क्या है ? स्वामी विवेकानंद उसकी बार-बार उद्घोषणा करते हैं- प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक जाति का एक न एक विशिष्ट आदर्श अवश्य होता है - राष्ट्र के समस्त जीवन में संचार करने वाला एक महत्वपूर्ण आदर्श (कह सकते हैं कि वह आदर्श राष्ट्रीय जीवन की रीढ़ होती है। परन्तु भारत का मेरुदंड राजनीति नहीं है, सैन्य शक्ति भी नहीं है , व्यावसायिक आधिपत्य भी नहीं है, और न यांत्रिक शक्ति ही है, वरन् है धर्म । केवल धर्म ही हमारा सर्वस्व है और इसी को हमें रखना भी है आध्यात्मिकता ही सदैव से भारत की निधि रही है ।

आध्यात्मिकता जिस अनुपात में बढती है , व्यक्ति और समाज उतना ही नैतिक होता जाता है। नैतिकता ही धर्म का मूलाधार है । स्वामी विवेकानंद कहते हैं- स्वाधीनता और स्वतंत्रता की बातें चाहे जितनी अच्छी लगें, पर विनय, नम्रता, भक्ति, श्रद्धा और विश्वास के बिना कोई धर्म नहीं रह सकता।

और चरित्र निर्माण होता कैसे है ? स्वामी जी कहते हैं- वह (धर्म) 'सीखना' नहीं 'होना' है। 'चोरी मत करो' इसे सब जानते हैं, पर इससे क्या ? इसे तो यथार्थ में उसी ने जाना जिसने चोरी नहीं की। 'दूसरों को हानि मत पहुँचाओ' यह बात हर एक को मालूम है पर इससे क्या लाभ ? जिन्होंने दूसरों को हानि नहीं पहुचायी उन्हीं ने इस वाक्य को अनुभव किया। उन्होंने इसे जाना और इस सिद्धांत पर अपने चरित्र का निर्माण किया।

अर्थात् चरित्र निर्माण की साधना जिसने की है वही धार्मिक या आध्यात्मिक है। मनु स्मृति में धर्म के दस लक्षण गिनाये हैं, वे चरित्र के ही विविध आयाम हैं, उनका समग्र मूर्तिमान स्वरुप नैतिक या धार्मिक पुरुष कहलाता है। किन्तु शाश्वत मूल्यों के सधानालय की नींव क्या है ? महाभारत में युधिष्ठिर यही प्रश्न भीष्म पितामह से करते हैं :

इमे जना नरश्रेष्ठ प्रशंसन्ति सदा भुवि ।
धर्मस्य शीलमेवादौ ततो मे संशयो महान्।।

(नर श्रेष्ठ ! पितामह ! भूमण्डल के सभी मनुष्य प्रधान धर्म के अनुरूप शील की ही अधिक प्रशंसा करते हैं , अतः इस विषय में मुझे बड़ा भारी संदेह हो गया है।)

एक शील की साधना से सब गुण कैसे साध्य होंगे , शील ही सर्वप्रथम धर्म क्यों है ? ऐसा प्रश्न धर्मराज युधिष्ठिर करते हैं। उत्तर में भीष्म पितामह प्रवचन नहीं देते, भारतीय शिक्षा-पद्धत्ति के अनुसार, प्रेरक प्रसंग सुनाते हैं । पूर्व में यदि किसी ने शील को साध्य किया है, और परित्याग से प्राप्त विकार की अनुभूति की है, तो यह उदाहरण हमारी शील साधना में मार्गदर्शक हो सकता है। भीष्म पितामह शील के प्रभाव और शील के अभाव को समझाने के लिए इन्द्र और प्रह्लाद की रोचक कथा सुनाते हैं। चरित्र निर्माण में प्रेरक कथा प्रसंगों का क्या महत्व है, इसका दिग्दर्शन भी यहाँ होता

है। यह कथा मूल रूप से नारद ने धृतराष्ट्र से, धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से और सभा में उपस्थित भीष्म पितामह ने सुनकर युधिष्ठिर से कही। जब महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय भी कहते हैं- ग्रामे-ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे-ग्रामे शुभा कथा: तब, गांव-गांव में सभाओं की स्थापना तथा शुभंकर कथाओं के माध्यम से सदाचारी जन-मन तैयार करने की हमारी प्राचीन पद्धत्ति की ओर ही संकेत करते हैं। श्रद्धावान लभते ज्ञानम् इस सूक्ति का भी कथा में समावेश है।

भगवन्! मैं अपने कल्याण का उपाय जानना चाहता हूँ इस प्रश्न के साथ इन्द्र सर्वप्रथम देवगुरु बृहस्पति के पास जाता है। उनसे प्राप्त ज्ञान के बाद भी इन्द्र प्रश्न करता है - इससे भी बढ़कर कोई विशेष वस्तु है क्या? और बृहस्पति अपनी सीमा बताकर अधिक जानने हेतु दैत्यगुरु शुक्राचार्य जी के पास जाने का परामर्श देते हैं। 'अपने ज्ञान का अहंकार नहीं और अपने सर्वज्ञ होने का भ्रम नहीं ' यह है भारत के संस्कार की ऋषि-परम्परा ।'विनय' की साधना का 'विनयावनत' व्यवहार। इन्द्र के यही दो प्रश्न शुक्राचार्य के समक्ष भी उपस्थित हुए। शुक्राचार्य ने भी अपनी सीमा बतायी। इससे विशेष श्रेय का ज्ञान पाने के लिए प्रह्लाद के पास भेज दिया। प्रह्लाद ने कहा मुझे त्रिलोक के राज्य की व्यवस्था में व्यस्त रहना पड़ता है अत: उपदेश का समय नहीं है। ज्ञान प्राप्ति के लिए संयम और धैर्य की साधना आवश्यक है। ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र कहता है मैं आपको अवसर मिलने की प्रतीक्षा करूँगा। इन्द्र की शालीनता के आगे शीलवान प्रह्लाद को स्वीकार में सिर हिलाना पड़ा। ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र ने पूछा- आपको त्रिलोकी का राज्य कैसे मिला ? उत्तर में प्रहलाद ने कुछ बातें बतायीं - 'मैं राजा हूँ' यह अभिमान नहीं करता , विद्वानों की निंदा नहीं करता अपितु उनसे नीति का उपदेश सुनता हूँ , किसी के दोष नहीं देखता और धर्म में मन लगाता हूँ। क्रोध को जीतकर मन और इन्द्रियों को काबू में किये रहता हूँ।

प्रह्लाद ने ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र की सेवा से अत्यंत प्रसन्न होकर , वर मांगने को कहा। इन्द्र ने कहा मुझे आपका शील प्राप्त करने की इच्छा है।

भवत: शीलमिच्छामि प्राप्तुमेष वरो मम।

प्रह्लाद के 'एवमस्तु' कहते ही कथा मार्मिक मोड़ पर पहुँचती है। रूपक शैली में 'शील' शाश्वत जीवन मूल्यों का आधार क्यों है, इसका उत्तर कथा में मिलता है। प्रह्लाद के शरीर से क्रमश: परम कान्तिमान, छायामय तेज मूर्तिमान होकर निकलने लगते हैं और प्रह्लाद केवल निस्तेज प्रश्न ही कर पाता है - आप कौन हैं ? 'को भवानिति' ?

सर्वप्रथम प्रह्लाद का शरीर 'शील' ने छोड़ा। इसके निकलने का प्रह्लाद को आश्चर्य होने का कोई कारण नहीं था क्योंकि दान दी वस्तु तो देनी ही थी। पर यह क्या ? शील के जाते ही दूसरी मूर्ति शरीर से निकली। 'आप कौन?' के साथ संभवतया यह जिज्ञासा भी थी 'आप क्यों ?' और क्रमश: निकलने वाली ज्योतिमूर्तियाँ भी प्रह्लाद के अन्तर्मन के भाव को पढकर ही उत्तर दे रही थीं। दूसरा तेजपुंज बोला - प्रह्लाद ! मैं धर्म हूँ, 'यत शीलं ततो ह्यहम्' जहाँ शील होता है , वहीं मैं भी रहता हूँ।

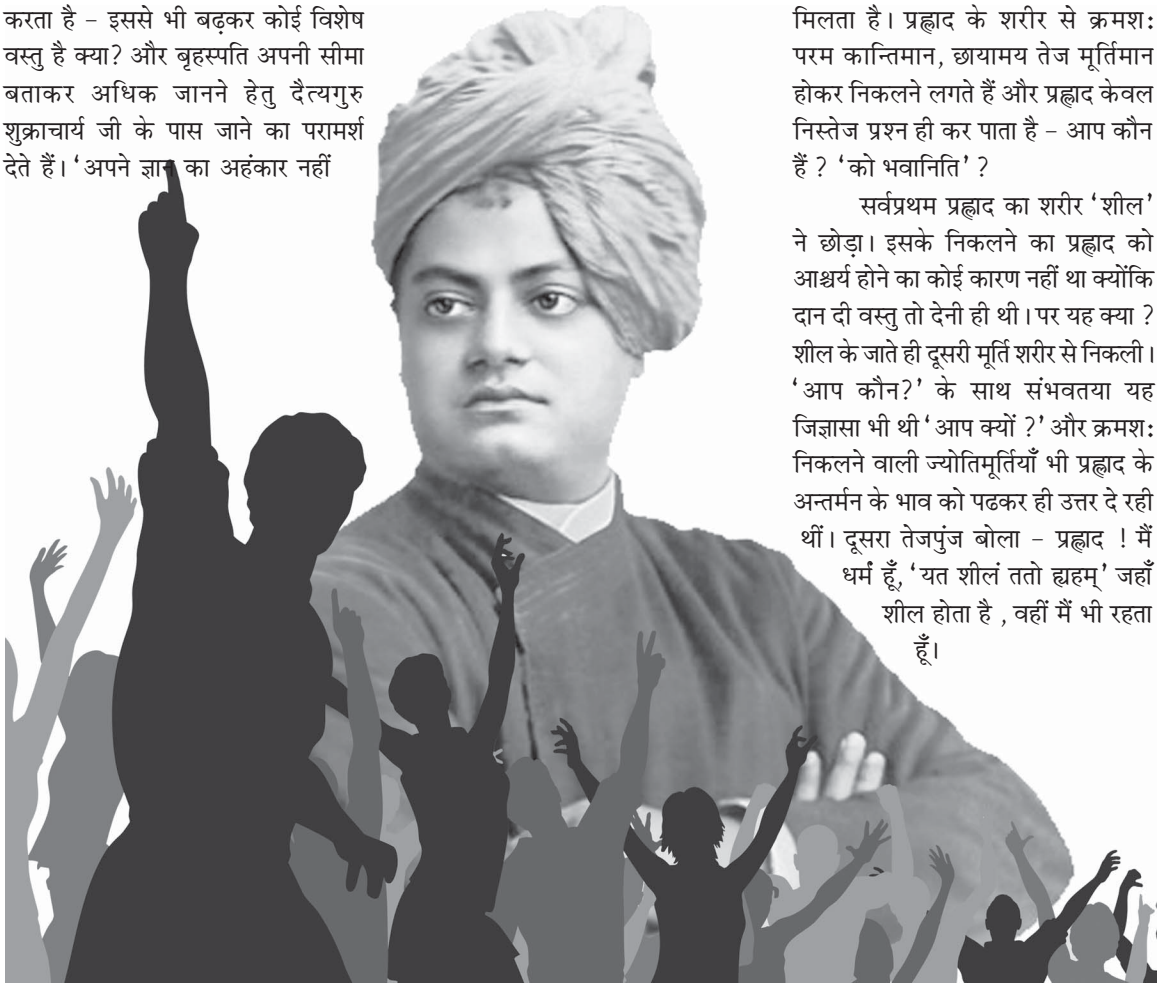

तभी तीसरा ज्योतिपुंज निकला। मैं सत्य हूँ। 'सत्य ही धर्म है , धर्म ही सत्य है' हम अन्योन्याश्रित हैं और शील के अधिष्ठान पर रहते हैं। शील और धर्म के पीछे मैं भी जाता हूँ।

सत्य के पीछे 'सदाचार' यह कहते हुए चल दिया कि 'जहाँ सत्य होता है वहीं मैं भी रहता हूँ।' महाशय सत्य के पीछे निकले महाबली 'बल'। पूछने पर बताया , 'जहाँ सदाचार होता है वहीं मेरा भी स्थान है।' सदाचार के साथ बल होने पर ही दैवी सम्पदा बनती है, सदाचार के बिना बल आसुरी और बिना बल का सदाचार लाचारी बन जाता है। असुर का बल भोगी बनाता है, और भोग में बाधक बनने वालों को शत्रु समझता है।

'ईश्वरोऽहं अहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान सुखी'

'विधायी धर्म का संरक्षण' करने के लिए 'विजयशालिनी संघबद्ध कार्यशक्ति' का बल चाहिए। किन्तु धर्म, सत्य और सदाचार के साथ बल चले जाने पर ही इतिश्रि नहीं हुई। अंत में प्रभामयी परमेश्वरी देवी प्रकट हुई। यह थीं राज्य श्री लक्ष्मी। 'वीर भोग्या वसुंधरा' बल-पौरुष से ही राज्य श्री का अर्जन-सर्जन होता है।

अब कथा का सार भाग आता है -

धर्मः सत्यं तथा वृत्तं बलं चैव तथाप्यहम्।
शीलमूला महाप्राज्ञ सदा नास्त्यत्र संशय।।

(महाप्राज्ञ ! धर्म, सत्य, सदाचार, बल और मैं (राज्यलक्ष्मी) - ये सब शील के ही आधार पर रहते हैं - शील ही इन सबकी जड़ है, इसमें संशय नहीं है।)

यह 'शील' सर्वोपरि शाश्वत जीवन-मूल्य है यह प्राप्त कैसे होता है ? यह प्रश्न उपस्थित होता है। धृतराष्ट्र के समक्ष दुर्योधन ने भी यही प्रश्न किया था। धृतराष्ट्र ने कहा-

अद्रोहः सर्वभूतेषु कर्मणा मनसा गिरा।
अनुग्रहश्च दानं च शीलमेतत् प्रशस्यते।।
यदन्येषां हितं न स्यादात्मनः कर्म पौरुषम्।
अपत्रपेत वा येन न तत् कुर्यात् कथंचन।।
तत्तु कर्म तथा कुर्याद् येन श्लाघ्येत संसदि।
शीलं समासेनैतत् ते कथितं कुरुसत्तम।।

(शांति पर्व 124/66-68)

(मन, वचन और कर्म द्वारा किसी भी प्राणी से द्रोह न करना , सब पर दया करना और यथा शक्ति दान देना - यह शील कहलाता है, जिसकी सब लोग प्रशंसा करते हैं। अपना जो भी पुरुषार्थ और कर्म दूसरों के लिए हितकर न हो अथवा जिसे करने में संकोच का अनुभव होता हो, उसे किसी तरह भी नहीं करना चाहिए। जो कर्म जिस प्रकार करने से भरी सभा में मनुष्य की प्रशंसा हो उसे उसी प्रकार करना चाहिए। कुरुश्रेष्ठ ! यह तुम्हें थोड़े में शील का स्वरुप बताया गया है।)

शिक्षक के लिए शील की साधना क्या है ? उपरोक्त कथन का भाष्य विद्यालय परिवेश में करने पर यह ध्यान में आता है - मेरे सभी छात्र समान रूप से स्नेह का भाजन बनें , अपनी सम्पूर्ण सामर्थ्य से मैं विद्या का दान करूँ और अपनी सामर्थ्य में वृद्धि करता जाऊं। जो विद्यार्थी एवं विद्यालय के हित में न हो ऐसा कोई कार्य मैं कदापि न करूँ। मेरे प्रत्येक आचरण में पारदर्शिता हो। जिसकी अपेक्षा मैं विद्यार्थियों से नहीं करता वही कार्य मुझे करने में संकोच का अनुभव हो। जिस आचरण की सभा में प्रशंसा हो वही मैं करूँ, भर्त्सना लायक कोई कार्य न करूँ। और इन विधि निषेधों का मैं अहर्निश चिंतन-मनन-अनुगमन करूँ तो मैं शील की साधना के सोपान चढ़ता माना जाऊंगा।

किन्तु यह कार्य इतना सुगम नहीं है। सुगम होता तो साधना , तप नहीं कहते। सुगम तो गिरना है , उठने के लिए तो ऊर्जा का सृजन और विनियोग करना पड़ता है। महाभारत अत्यंत मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का ग्रन्थ है। यह शील की साधना का उपदेश 'धृतराष्ट्र' कर रहा है और जिज्ञासु श्रोता 'दुर्योधन' है ! कितना विरोधाभासी वक्तव्य है! किन्तु इसी में मर्म छिपा है। एक बुद्धिमान से बुद्धिमान व्यक्ति भी जितने उत्तर दे सकता है उससे अधिक प्रश्न एक मूर्ख पूछ सकता है। 'प्रश्न' और 'जिज्ञासा' में भेद का प्रदर्शन करने के लिए ही 'शील' तत्त्व के व्याख्याताओं की श्रंखला प्रह्लाद, नारद, धृतराष्ट्र, भीष्म तक जाती है तो श्रोता इन्द्र, धृतराष्ट्र, दुर्योधन और युधिष्ठिर हैं। 'जिज्ञासु' उपदेश के अनुरूप आचरण के साधना-पथ पर एक-एक पद बढता जाता है जबकि 'प्रश्नकर्ता' तर्क-बुद्धि से वाक्-विलास में मग्न 'प्रश्नों की घाणी' में जुते बैल की तरह परिधि पर ही घूमता रहता है। दुर्योधन ने सुना पर गुना नहीं। इसी से भीष्म ने कहा -

एतत् कुरुष्व कौन्तेय ततः
प्राप्स्यसि तत् फलम्

अर्थात् 'तुम भी इसका आचरण करो, इससे तुम्हें भी वही फल प्राप्त होगा।'

यह अत्यंत वैज्ञानिक उद्घोषणा है। विज्ञान के किसी प्रयोग की विधि के पदों का त्रुटिहीन अनुसरण करने से वही परिणाम प्राप्त होगा, ऐसा विश्वास रहता है। वैसा ही यह कथन है। आचरण के लिए सतत् अभ्यास की आवश्यकता होती है। सतत् सदाचरण की पुनरावृत्ति से कृति स्वभाव बनती है और इसी का स्वाभाविक परिणाम संस्कार दृढमूल होकर प्रतिवर्ती क्रिया की तरह व्यवहार में आते हैं।

अतः अध्यापक के चयन का आधार केवल बौद्धिक परीक्षा या तर्क शक्ति का आकलन नहीं, बल्कि आचार्य का आचरण जांचना-परखना सर्वोपरि कसौटी है। शिक्षक के शील का सतत् मूल्यांकन, शिक्षार्थियों के संस्कार की चिंता से हमें मुक्त करेगा। दुर्भाग्य से अभी हम विद्यार्थियों के नैतिक पतन के प्रति चिंता प्रकट करते हैं, पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा के समावेश की बात करते हैं, पर यह सब जिसके माध्यम से करवाना है, उन शिक्षकों में 'धृतराष्ट्र-दुर्योधन' वार्ता का मंचन हो रहा है या 'भीष्म पितामह-युधिष्ठिर' संवाद का चिंतन? आज यही 'यक्ष-प्रश्न' उपस्थित है। और इसका उत्तर हमें ढूंढना ही होगा। नान्य पन्था :।।❑

(कृषि विज्ञान विषय के व्याख्याता हैं)

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय सी.टी.ई.

केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर-302 031 (राज.)

दूरभाष : 0141-2680466 (कार्यालय), 0141-2681583 (प्राचार्य/फैक्स)

बेवसाइट : www.shriagrasenpgttcollegecte.com, **ई-मेल :** info@shriagrasenpgttcollegecte.com

संस्था अन्तर्गत संचालित विभिन्न पाठ्यक्रम

- एम.एड. एक वर्षीय पाठ्यक्रम (राजस्थान वि.वि. से सम्बद्ध)
- बी.एड. एक वर्षीय पाठ्यक्रम (राजस्थान वि.वि. से सम्बद्ध)
- एस.टी.सी. द्वि वर्षीय पाठ्यक्रम (राज्य सरकार से सम्बद्ध)
- केन्द्र प्रवर्तित योजनान्तर्गत सृजित सी.टी.ई. संस्थान
- एम.एड. द्वि वर्षीय पाठ्यक्रम (इग्नू, नई दिल्ली से सम्बद्ध)
- एम.ए. (शिक्षा) द्वि वर्षीय पाठ्यक्रम (इग्नू, नई दिल्ली से सम्बद्ध)
- बी.एड. द्वि वर्षीय पाठ्यक्रम (इग्नू, नई दिल्ली से सम्बद्ध)
- पी.जी.डी.एस.एल.एम. द्वि वर्षीय पाठ्यक्रम (इग्नू, नई दिल्ली से सम्बद्ध)
- गाइडेन्स सर्टीफिकेट एवं डिप्लोमा कोर्स (इग्नू, नई दिल्ली से सम्बद्ध)
- मूल्य शिक्षा सर्टीफिकेट एवं डिप्लोमा कोर्स (इग्नू, नई दिल्ली से सम्बद्ध)

संस्था अन्तर्गत उपलब्ध सुविधाएँ

- छात्र एवं छात्राओं हेतु पृथक छात्रावास व्यवस्था
- कम्प्यूटर प्रशिक्षण की सुविधा
- पुस्तकालय सुविधा
- शैक्षिक तकनीकी प्रयोगशाला
- मनोविज्ञान प्रयोगशाला
- विज्ञान प्रयोगशाला
- आर्ट एण्ड क्राफ्ट प्रयोगशाला
- स्थापन्न प्रकोष्ठ
- परामर्श प्रकोष्ठ
- महिला प्रकोष्ठ
- शोध एवं प्रकाशन
- संस्कार केन्द्र

श्रीमती आशा गोलेचा
अध्यक्ष

प्रो. जे.पी.सिंघल
मंत्री

डॉ. अशोक कुमार शर्मा
प्राचार्य

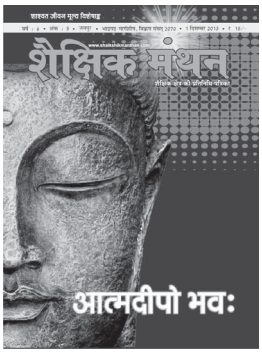

हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव का न केवल शारीरिक विकास हो अपितु उसके साथ मन, बुद्धि का विकास व आत्म कल्याण भी हो इस ओर भी ध्यान दिया है। वर्ण व्यवस्था भी हमारी संस्कृति की विशेषता रही है जिससे न केवल मनुष्य आत्मनिर्भर बना अपितु परिवार, समाज व राष्ट्र भी स्वावलम्बी बना रहा है।

वर्ण-व्यवस्था की बारीकियाँ

❑ **डा. नन्दसिंह नरूका**

विश्व में भारतीय संस्कृति अजर-अमर रही है क्योंकि इस संस्कृति द्वारा सम्पूर्ण जगत का कल्याण हुआ है। हमारे मनीषियों ने केवल सभ्यता की ही बात नहीं की, सभ्यता जिन संस्कारों से उत्पन्न होती है उन संस्कारों का मनुष्य मात्र में निर्माण हो उस ओर विशेष ध्यान दिया है। संस्कारजन्य आचरण को ही संस्कृति कहते हैं। संस्कृति संस्कारों से बनती है जिसका सम्बन्ध आत्मा से है। सभ्यता बाहरी आडम्बर है जिसका सम्बन्ध शरीर से है। इस शाश्वत रहने वाली संस्कृति पर ही इकबाल ने लिखा है-

यूनान मिश्र रोमा सब मिट गये जहाँ से।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।।
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा ।
सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तां हमारा ।।

हमारी संस्कृति में भौतिकवाद की पूजा नहीं हुई है, लेकिन भौतिकता को ठुकराने वाले हरिश्चन्द्र, शिवि, दधीचि, रन्तिदेव और राम की पूजा हुई है। हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव का न केवल शारीरिक विकास हो अपितु उसके साथ मन, बुद्धि का विकास व आत्मकल्याण भी हो इस ओर भी ध्यान दिया है। वर्ण व्यवस्था भी हमारी संस्कृति की विशेषता रही है जिससे न केवल मनुष्य आत्मनिर्भर बना अपितु परिवार, समाज व राष्ट्र भी स्वावलम्बी बना रहा है। उसी पर हम थोड़ा विचार करते हैं।

मनुष्य जन्म के बाद जैसे-जैसे व्यावहारिक ज्ञान को समझने लगता है वैसे-वैसे उस ओर बढ़ता है जिस ओर उसे सुख व आनन्द मिलता है। सर्वप्रथम मनुष्य शारीरिक आनन्द जैसे रुचिकर खाने की वस्तुओं आँखों को रुचिकर लगने वाली वस्तुओं, इन्द्रियों को आनन्द प्राप्त हो उस ओर आकर्षित होता है। अपने प्राणों की रक्षा करने के लिए तरह-तरह की सुरक्षा के उपाय करता है, जैसे ओढ़ना, छाया में जाना, खतरे की जगह से दूर हटना आदि। इसी क्रम में मनुष्य अपने मन को सन्तुष्ट करने वाली वस्तुओं की ओर आकर्षित होता है जैसे मनोरंजन के स्थानों पर जाना, संगीत सुनना, कहानिया सुनना, उत्साहवर्धक बातों में आनन्द लेना आदि। अपने ज्ञान की वृद्धि करने के लिए, समझ बढ़ाने के लिए शिक्षा प्राप्त करता है, पुस्तकें पढ़ता है, प्रवचन, उपदेश सुनता है आदि तथा उससे भी ऊपर उठने के लिए मनुष्य आध्यात्मिक ज्ञान, ईश्वर प्राप्ति की ओर भी बढ़ता है। इन्हें हम अन्नमय कोष, मनोमय कोष, ज्ञानमय कोष, (बुद्धि के विकास, आनन्द हेतु) तथा आत्मिक उन्नति मोक्ष प्राप्ति के रूप में जान सकते हैं।

भारत के ऋषि-मुनियों व तपस्वियों ने मनुष्य के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आत्मिक विकास को ध्यान में रखकर यहाँ के समाज को इन सभी सुखों/आनन्दों को प्राप्त करने के लिए वर्ण व्यवस्था के रूप में अनुभाजित किया। ऐसे स्वभाव के मनुष्य जो शारीरिक दम-खम रखते हैं, राष्ट्र एवं समाज की रक्षा करने में समर्थ है उन्हें शासन/राज्य की रक्षा व्यवस्था में लगाया जाता था उन्हें क्षत्रिय कहा उनके अर्थ की व्यवस्था राज्य/शासन से होती थी जिससे उनके परिवार का पालन पोषण होता रहे। दूसरे ऐसे मनुष्य जो ज्ञान, शिक्षा प्राप्त करने में रुचि रखते हैं दूसरों को ज्ञान, शिक्षा दे सकते हैं उन्हें ब्राह्मण कहा उनके अर्थ की व्यवस्था समाज से होती थी। समाज को ये अपना ज्ञान, सलाह (परामर्श) देते थे तथा भेंट में समाज से जो प्राप्त होता था उससे इनका जीवन यापन होता था। तीसरे श्रेणी के वे मनुष्य होते हैं जो अपने स्वयं का व्यवसाय कर सकते हैं उन्हें वैश्य कहा तथा ये स्वयं अपनी मेहनत से धन की व्यवस्था करते थे तथा शासन को कर लगान के माध्यम से तथा ब्राह्मण को ज्ञान, सलाह, परामर्श लेने हेतु धन प्रदान करते थे। चौथी श्रेणी के वे मनुष्य होते हैं जो इन तीनों से परे इनके कार्यों में सहयोग सहायता करते हैं जैसे क्षत्रियों के घर आदि की रक्षा, गृह कार्यों में सहयोग, ब्राह्मण के पूजा व ज्ञान केन्द्रों की सम्भाल, सफाई, पानी आदि की व्यवस्था, वैश्यों के व्यवसाय, खेती, पशु-पालन आदि के कार्यों में सहयोग, सेवा प्रदान करना उन्हें शूद्र कहा गया। ये व्यवस्था मनुष्य की योग्यतानुसार थी। ''जन्मना जायेते शूद्रा संस्कारे द्विज उच्येते।'' अर्थात् जन्म से सभी शूद्र माने जाते रहे तथा योग्यता अनुसार अन्य वर्गों के पात्र बन जाते थे। इस व्यवस्था में सभी को अपना रोजगार धन्धा प्राप्त था

किसी के सम्मुख जीविकोपार्जन की समस्या नहीं थी। इन्हीं वर्णों में जो मनुष्य लगे हुए थे उन्होंने भी अपने-अपने कार्यों का बटवारा कर लिया था। कालान्तर में ये कार्य उनकी पहचान बन गये तथा इसी से जातियाँ बनने लग गई। जातियाँ किसी ने बनाई नही अपितु जो जिस कार्य को कर रहा था वही उसकी पहचान जाति का रूप हो गई जैसे लोहे का कार्य करने वाल लुहार, काष्ट का काम करने वाला काष्टकार (खाती), सोने का काम करने वाला सुनार, तेल निकालने वाला तेली, कुम्भ बनाने वाला कुम्भकार (कुम्हार), चर्म का काम करने वाला चर्मकार (चमार), रंग ने वाला रेगर आदि। ये सभी कार्य व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार कर रहा था तथा अपनी जीविकोपार्जन कर रहा था। अपनी भावी पीढ़ी को भी ये रोजगार के साधन पैतृक प्राप्त होने लगे। इस व्यवस्था से समाज जीवन की गाड़ी सुखद रूप से चलती गई। परन्तु जब समाज में एक जाति द्वारा अपने कार्य को श्रेष्ठ तथा दूसरे के कार्य को नेष्ठ समझने का भाव आया तभी से ऊँच नीच के भाव, छूआछूत के भाव आये जो हमारे समाज की कमजारी बन गये।

आधुनिक जीवन में भी ये चारों वर्ण आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। शासन के कार्य रक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य, सेवा, प्रशासन आदि में लगे हुए कार्मिक आज के क्षत्रिय है जिनके धन की वेतन की व्यवस्था शासन द्वारा होती है। दूसरे वे व्यक्ति जो सलाह, ज्ञान, परामर्श देते हैं जैसे चार्टर्ड एकाउन्टेंट, वकील, चिकित्सक, शिक्षक आदि ब्राह्मण श्रेणी के हैं जिनके धन की व्यवस्था समाज से सलाह, ज्ञान, परामर्श देने के बदले होती है। तीसरे वे जो अपने अपने काम-धन्धा चलाते हैं, व्यापार करते हैं, कृषि-पशुपालन आदि कार्य करते हैं, उत्पादन, वितरण के कार्य में लगे हैं वैश्य श्रेणी के हैं जिनमें आधुनिक ठेले वाले से लेकर बड़े-बड़े उद्योग चलाने वाले भी शामिल हैं। चोथे वे है जो इन सभी के सहयोगी हैं इनके कार्यों में हाथ बंटाते है वे शूद्र श्रेणी के ही हैं। इनमें सुरक्षागार्ड, सफाई कार्मिक, माली, रसोईया आदि सम्मिलित है। जैसे आधुनिक काल में अपनी योग्यता अनुसार किसी भी श्रेणी में जाया जा सकता है वैसे ही पुराने समय में भी जाने की स्वतन्त्रता थी। परन्तु बाह्य आक्रमणकारी आने उनके शासन स्थापित होने निज स्वार्थता की वृद्धि से समाज में बुराई आने लग गई। उस व्यवस्था में रोजगार की समस्या नहीं थी, आज नवयुवकों के सामने रोजगार की समस्या है क्योंकि वे अपने पैतृक कार्य से घृणा कर दूसरे के कार्य को श्रेष्ठमान कर उसे बिना मेहनत पाना चाहते हैं। मेहनत व योग्यता से पहले भी किसी वर्ण में जाया जा सकता था तो आज भी जाया जा सकता है।

अत: मनुष्य को मनु को गाली नहीं देकर अपनी योग्यतानुसार कार्य का सृजन करना चाहिए न कि अन्धानुकरण। हमें अपनी संस्कृति व वर्णाश्रम व्यवस्था पर शर्मिन्दा नहीं स्वाभिमानी होना चाहिए। ❑

(वाणिज्य प्राध्यापक-राज.महाविद्यालय, बूंदी)

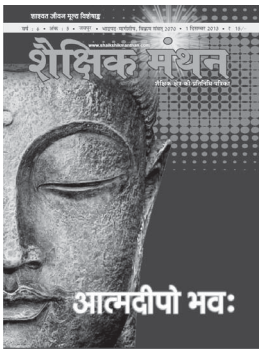

There are numerous ways and dictums which constitutes Dharma. For example- God is one. You can call him in any name. Man is essentially divine. Man is for the universe not the reverse universe is for the man. Treat the Mother as god, Treat the Father as god, atreat the Preceptor as god, and Treat the Guest as god.

Life !

❑ **N. Krishnappa**

What is the purpose of life?

There are two schools of thought, one believes that Happiness is the purpose of life. The other declares that the purpose of life is to achieve salvation or oneness with the Almighty.

Those who believe in the concept of happiness, search for the means of happiness, the material things which make man happy. Whereas the other group tries to mould the human nature to grow beyond our earthly needs. So that, we could know ourselves and the Almighty.

In essence one is Materialistic life-predominantly of the west, the second is spiritualistic of the east. Whether you believe in God or not the attitude towards life is either of the two.

Good Initiations but wrong path

The present day education system is mainly materialistic whereas in our country sometimes few individual intellectuals were expressing the idea of values to be inculcated in the education. But the fault was always pessimistic. So many commissions starting from Kothari commission to the present.

Day proclaim that we need value based education without which educated individuals would be Rakshasas-Demons caring only for their own personal ambitions and happiness. Inspite of such voluminous declarations, no change is seen in the educational pattern. As we perused the path of material development we are dragged into the whirlpool of selfishness and corruption. So many good concepts are there, people talk about them on the platforms and convocations. But the result is still chaotic. We are made to remember the age old adage ' The Path of Hell is Paved with the best of Intentions'.

In this background, Should we write and preach about values to be inculcated in the educational system? The answer is a definite Yes. As there are many individuals and institutions who are systematically pursuing the cause of education with the spiritual backgrounds, the subject would be helping them to push ahead in their endeavors.

Education is the manifestation of divinity already in man- proclaimed Swami Vivekananda. Man is essentially divine. Our education should make him understand his true nature. That means we have to overgrow the present day materialistic education and follow the spiritualistic path.

Follow Purusharthas

In this path the first step should to develop faith in the PURUSHARTHAS. And they are Four in number- Dharma, Artha, Kama, and Moksha. In fact Purusharthas are to be the basis of all our pursuits of Knowledge.

In describing the nature of Ithihasa-History, it is told "धर्मार्थ काम मोक्षाणां उपदेश समन्वित्। पूर्ववृत्तं कथायुक्तं इतिहासं प्रचक्षते।" The happenings of the past in a story form which is full of धर्म, अर्थ, काम **and** मोक्ष concept is called History. History is not only the narration of facts according to chronology. It should show the path of achieving the four Purusharthas. Accordingly Ramayana and Mahabharatha are only "Ithihasa Granthas" of our times.

Dharma Basis of Life

Now also we have to teach History to show the way in understanding and imbibing the Purusharthas - धर्म, अर्थ, काम **and** मोक्ष. First Important things to know is Dharma does mean religion. There is no word in all European languages to express the concept of

Dharma. Dharma is Dharma only. Religion, Caste, Opinion are all different. There is only one Dharma, It should be called as manava Dharma. Dharma is not the creation of any individual, it is अपौरुषेय. Whreas all religions are started by individuals, have a book or scripture and a set of rules to follow. They are all पौरुषेय. In this country own Bharath- there are many religions and all of them follow Dharma. Dharma can include the religions of future also. Dharma is the behavioral character which upholds and binds the society. धारणात् धर्म इत्याहुः। धर्मों धारयते प्रजाः- Vedas proclaim धर्म चर follow धर्म– धर्म is to be practiced.

There are numerous ways and dictums which constitutes Dharma. For example- God is one. You can call him in any name. Man is essentially divine. Man is for the universe not the reverse universe is for the man. Treat the Mother as god, Treat the Father as god, atreat the Preceptor as god, and Treat the Guest as god. Speak the Truth, Follow the धर्म. These are time tested values. All people irrespective of their religions, Country, Language, Color, can follow these. They need not to change their religion to follow these concepts.

Dharma Unites All. So we should not confuse धर्म with religion. Because of understanding this, Bharath remained one country in spite of many kingdoms, many gods and many religions. The Judiciary followed धर्म not a religion. This was one country not one state. There were 56 states, but the value system was only one. धर्म shasathras were same. Same civil and criminal laws were followed. The Judiciary was completely independent of the state. In fact there was a time in our Bharath when there was no institution called state न् राज्यो नैव राजासीत्। न दंड्यो न च दंडिकः। धर्मिणैव प्रजा सर्वाः। रक्षंतिस्म परस्परम् - There were no states, No King, No Criminal, No Judge. Because all people were protecting each other through धर्म. It was a stateless Society! It should be our aim to create a society where state and Judiciary becomes irrelevant when all the people follow Dharma. In a Good

Family there will not be a rule book or punishment, because all membersof the family live for others through धर्म. धर्म guides them in the proper way. When one person follows Dharma, he is protecting others right. Because of this the saying was there. धर्मो रक्षति रक्षित: Dharma protects where it is protected.

Two Concepts Punya-Papa

In order to understand Dharma, Two more concepts are to be imbibed. पुण्य ग्रुछ पाप पुण्य is not only good deed. Again there is no corresponding words for पुण्य and पाप. in the European languages. Bhagavaan Veda Vyaasa has very succinctly described boath the concepts in ones line- परोपकाराय पुण्याय, पापाय परपीड़नं. Doing good to others results in Punya, doing Harm to others results in Papa. Thus पुण्य and पाप are results of our actions towards our fellow beings.

The speciality of our traditional education system was to make every individual to differentiate between his actions whether they give him Punya ëor Papa. These two are the touch stones of our behavior Desist from doing Papa. Always go for doing Punya. We were owned like that only.

अकर्तव्यं न कर्तव्यं प्राणै: कंठगतैरपि। कर्तव्यमेवा कर्तवयं प्राणै: कंठगतैरपि।। That which should not be performed, should not be done even at the cost of life. Same thing regarding the do's of life even at the cost of life whatever is to be performed should be performed.

Armed with these concepts, our people who were often described as, mild, docile, and lazy withstood the on slaughts of all cruel foreigners for more than a thousand years. We gave our life, not our Dharma. Guru Tegbahaddur proudly declared सरदिया शान दिया. I have sacrificed my head, not my belief. He was be beheaded for not accepting Islam. These concepts of पुण्य and पाप were the essence of all hatchings, whether in a house, school, temple or society. The whole society had ingrained these concepts.

"They had that moral courage to sacrifice anything at the altar of धर्म. Hoards of non belief, armin of alien culture could not shake their determinations of protecting धर्म. The two innocent children of Gurugovinda Singh smilingly accepts जीवन्त् समाधि. Live burial at the hands of cruel Islamic tyrants. They never accepted conversion.

" Unfortunately our present day education ridiculesly these concepts as superstitions, blind belief etc… and in the name of pragmatism motivating all to become more selfish and self centered.

Develophumility

One more value of education was humility. विनयं The famous saying विद्या ददाति विनयं. Education provides humility. The more a person becomes educated he would become more humble and respects all others. This was the outlook of all.

But present education stresses more on self respect, self esteem. Naturally all educated persons feel and expect that they are to be recognized and respected. And they cannot think of others qualities and greatness. As a consequence, they become arrogant and demands recognition. They are easily provoked if they are not recognized properly. There are instances where people have wolked out of meetings, because of the fault of one individual the organizer that he was not mentioned properly.

Basic Values

Like this, instances of basic values which are not only forgotten but being replaced by more Vulgar exhibitionism of material supremacy. मातृ देवो भव:, पितृ देवो भव:, आचार्य देवो भव:, अतिथि देवो भव:, सत्यं वद- धर्मं चर। All these concepts which were the basics of education are conveniently forgotten.

Earn money through any means and enjoy life- these two things अर्थ and काम् have become the motivaters of life.

As a result there is unhealthy competitions to amass wealth and a vulgar display of wealth. Nobody feels guilty about the fall in values. There was one concept of 'Shame' in each family and in each society. The society would not accept this idea of nakedness. No doubt animals are naked. Many times children are naked. But a grown up human being would not display the body. It is a shameful act. But slowly that taboo is discarded. The arrogance of wealth, education, power and a sense of fool hardiness have come over the society. If anybody questions this development, the answer would be 'what if', 'who cares', 'it is my way', 'my wish', 'who are you to ask'. Shamelessness has entered the psyche of the educated. One could estimate the fall by this example. Formerly a student was to be humble, obedient, and not craving for amenities. The saying was 'सुखार्थं व त्यजेत् विद्या। विद्यार्थी व त्यजेत् सुखं।' if you are a seeker of luxury leave the pursuit of education. If you seek education leave the pursuit of luxury. But now the concept which is prevailing in the society is that ' after all they are students. Let them to enjoy life. Only now they can enjoy. After wards they would be burdened with family life/ this permissiveness has entered all walks of life.

From God to Beast

Starting from this young student's life, this fall of attitudes is seen everywhere. Learned men thinks, orthodox religious leaders also are prey for this. This society where the people were proudly proclaiming 'सोहम्, दासोहम्, शिवोहम्. I am god, I am the servent of the god, I am Shiva, have started praying 'पापोहम्, पापकर्माम्, पापात्मा, पापसंभव' they find no difference in this attitude. Where is सोहम्, where is पापात्म्? Swami Vivekananda had Thundered in parliament of religions that- ' It is the greatest sin to call man a sinner', he showed the alternative 'आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धितायच' - the purpose of life is to achieve divinity through service of world.

Be Desciples of Maharshies not Macaulay

Like this, the erosion of value is the result of blindly aping the materialistic value system of the west. It is the result of thousands of the year's slavery. We could have changed these imitations of the west. But we followed the political leaders who were enamored by the dazzling materialistic progress of the west. They could not perceive the truth of the thinking of our great Maharshies. They made us to follow Macaulay instead of our Maharshies. Now everyone not only in our country, in all other countries is experiencing the futility of following the Materialistic approach to life. They are yearning for better alternatives. They don't have it. They are hoping the east- especially Bharath can give them that the alternative. Bharath is blessed with treasure of spirituality. But the leaders in all the fields should have this confidence- उद्धरेदात्मनात्मानम् - we have to uplift ourselves, out siders cannot uplift us. We ourselves with our own concepts, with our own techniques could uplift ourselves and on that strength we can save and guide the world in that path.

In A nutshell

For this

The belief in our selves following the Purusharthas धर्म, अर्थ काम **and** मोक्ष should be the basic need.

The concept of Punya and Papa should be the guiding force of all walks of life. This means that every individual can attain divinity through his own efforts, not through the mercy of any other soul.

"Vinaya" Humlity should be perceived as the greatest quality of any enlightened soul. For this the Upanishad's concepts मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव, सत्यं वद: धर्मं चर etc. should be developed as a part of progress of an individual.

Families should be perceived as the instruments of Samskaras. And the basic education is to be started from families. The parents should be motivated to manage the spiritual, ethical progress of the children instead of thinking only of their material comforts. All good Samskaras which the parents have received from their elders should be transferred to the younger generation before they complete 12 years. There should be informal talk about do's and don'ts of the individual as well as the society, at all the levels - family, educational institutions, temples and working places.

Finally all our efforts are to be motivated to have a child based education- Family based society and Dharma based life. ❑

(Sr. Pracharak, Kutumbh Prabodhan)

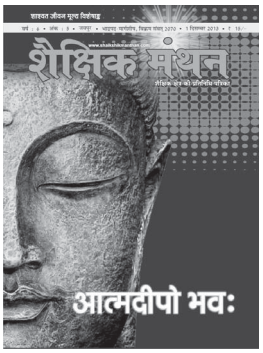

only spirituality that is driving force for a person to show interest in the concern for other humans and render help to others including animals and birds. It also drives us to preserve our environment. It makes man to realize that afterall he is just an atom in the vast ocean of creation thus making him humble.

Facts of Universal Values

Spirituality to world

❑ **Prof. K. Narahari**

To bring in the quality of social usefulness, fulfilment of the noble objectives, social harmony, practising and implementing for the welfare of the society-Value Education is needed. It is the most important aspect of Education. This is universally applicable in the best interest of the entire humanity and living beings. Men with values can only be the main capital to protect and enhance the wellbeing of the society.

Value education has two important facets. Professionals and students are given hints towards expertise in the profession chosen such as effective communicative techniques, hard work, skills, human relationships and a few others.Such men and women set their aim only on becoming successful in their career. The efficiency of mastering such courses is unquestionable.

Main facets of Value Education :

Value Education has the other important aspects too. These are universal values such as individual and human values, Familial Values, Social Values, Spiritual Values and National Values. Efforts are to be made towards the inculcation of these values at all stages of education and other training courses.

Individual Values :

Every individual should be made known the goal should not just be confined to earning money to eking out a living, careerism and happiness. For the sake of personal gains one should never exploit the people through ones profession. Every profession should have the goal of serving the people, the society and the country through the profession by practicing and preserving the noble traditions. It is our common experience that most politicians, Administrators, insincere social workers etc suffer from the decease of exploiting the people in the name of service. Those who take bribe and have greed for money have no concern even for the poor, the suffering people and genuine social works. They are devoid of human considerations and justice.

It is necessary to bestow attention on the cultivation of desirable emotions and keeping away of undesirable ones. On the individual level one should develop positive thinking, learning attitude, love, friendliness, discipline, cooperation, gratefulness, humility, self confidence, work culture, struggling against odds, hard work, large heartedness, forgiving nature, nonviolence, truth, internal & external purity, control of senses, not acquiring illegitimate wealth, always keeping the desires and wealth within the limits of Dharma or righteous code of conduct etc. At the same time anger, jealousy, selfishness, ego, hatred, falsehood, cheating, double standards and many such others are considered weaknesses. They have to be controlled effectively.

Familial and Social Values

On the family and social level one should inculcate concern for others, sympathy and empathy, pity, interest in others welfare, humanitarian approach, helping nature, mutuality, feel the responsibility of uplifting the socially, economically and educationally less privileged and concern for the weak, disabled and old people and those who are af-

It is our common experience that most politicians, Administrators, insincere social workers etc suffer from the decease of exploiting the people in the name of service. Those who take bribe and have greed for money have no concern even for the poor, the suffering people and genuine social works. They are devoid of human considerations and justice.

fected by the natural calamities, maintenance and protection of nature and environment, thus all aspects of life required for peaceful and harmonious living should be developed. Family can be the best means to initiate the above qualities in younger days. Elders in the family should take care to lay down good traditions and be rolemodel for practicing such values and eschewing the unwanted weaknesses.

National Values:

Most of the National Values of our country are universal. Such as वसुधैव कुटुंबकम (The entire world is one family), सर्वे जना: सुखिनो भवंतु (let all people be happy), freedom of worship, freedom of thought, developing science and technology in the best interest of the humanity, respect for women, not exploiting the nature, search for ultimate truth etc.

Spiritual Values:

Spirituality is the greatest contribution our country has bestowed to the world. It is only spirituality that is driving force for a person to show interest in the concern for other humans and render help to others including animals and birds. It also drives us to preserve our environment. It makes man to realize that afterall he is just an atom in the vast ocean of creation thus making him humble. In order to help younger generation to cultivate qualities of cooperation, coexistence, mutuality and mental peace they should be trained in spirituality. Even modern thinkers and educationists have come to the inevitable conclusion that Intelligent quotient, Emotional quotient and Spiritual quotient (IQ, EQ & SQ) should go hand in hand, agreeing with the views of our traditional thinkers.

All the above facets have to be considered in inculcating the universal values in moulding younger generations so that they can develop their total personality in physical, intellectual, mental, moral and spiritual fields. ❑

(EX-MLC, Prof. Eng. & Patrom, ABRSM)

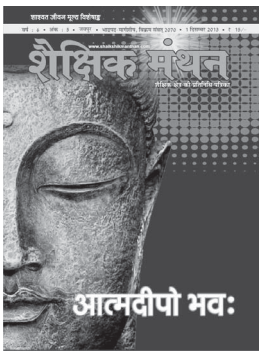

कई बार कुछ लोग जीवन मूल्यों को नकारात्मक जीवन मूल्य एवं सकारात्मक जीवन मूल्य के रूप में भी विभाजित करते हैं। नकारात्मक जीवन मूल्य समाज में दुराचार, अनाचार, अनीति, अन्याय एवं अत्याचार का कारण बनते हैं। समाज के दुर्जन एवं दुष्ट व्यक्ति ही ऐसे नकारात्मक जीवन मूल्यों को अपनाते हैं। हमारे जीवन मूल्यों में हमने सबसे ज्यादा जोर आचार प्रधान जीवन दृष्टि एवं जीवन व्यवहार पर दिया है। इस दृष्टि से हमारी परम्परा में पति-पत्नी, माता-पिता, भाई-बहिन, महिला-पुरुष के रिश्तों की मर्यादाओं, सत्य, शील ,दया, पवित्रता, दान परोपकार, सेवा, संयम, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, त्याग-समर्पण, संतोष, समदृष्टि आदि सदगुणों को अपनाने पर काफी बल दिया गया है। इन गुणों के कारण ही हमारा चरित्र बनता है।

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में शाश्वत जीवन मूल्य

❑ डॉ. बजरंग लाल गुप्ता

जीवन मूल्य का आधार होती है जीवन दृष्टि और फिर जीवन मूल्यों से बनते हैं जीवनादर्श। इस प्रकार जीवन दृष्टि, जीवन मूल्य और जीवनादर्श अन्योन्याश्रित हैं और एक अर्थ में परस्पर अंतर्भूत भी हैं। इस प्रकार कई बार इनके बीच कोई कठोर स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना भी कठिन हो जाता है। अथवा दूसरे शब्दों में ये एक-दूसरे के साथ इतने घुले-मिले होते हैं कि कभी-कभी इनके बीच का अन्तर ही समाप्त होकर ये समानार्थक हो जाते हैं। जीवन मूल्य व्यक्ति व समाज के व्यवहार एवं जीवन को निर्देशित एवं नियमित करते हैं। कार्य को दिशा व प्रेरणा देते हैं। इतना ही नहीं जीवनमूल्य व्यक्ति और समाज को पहचान भी देते हैं। कई बार कुछ लोग जीवन मूल्यों को नकारात्मक जीवन मूल्य एवं सकारात्मक जीवन मूल्य के रूप में भी विभाजित करते हैं। नकारात्मक जीवन मूल्य समाज में दुराचार, अनाचार, अनीति, अन्याय एवं अत्याचार का कारण बनते हैं। समाज के दुर्जन एवं दुष्ट व्यक्ति ही ऐसे नकारात्मक जीवन मूल्यों को अपनाते हैं। और इस कारण वे समाज के लिए सब प्रकार से हानिप्रद होते हैं। दूसरी और सकारात्मक जीवनमूल्य से तात्पर्य सदाचार एवं न्यायसंगत जीवन मूल्यों से होता है और वे सदैव समाज के लिए हित संवर्द्धक होते हैं। सरल शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि सकारात्मक जीवन मूल्य का अर्थ है नैतिक मानदण्ड। यहाँ हम इन सकारात्मक जीवन मूल्यों की ही चर्चा करेंगे। वास्तव में तो 'जीवन मूल्य' शब्द सकारात्मक जीवन मूल्यों के लिए ही प्रचलित होने से वह इस अर्थ में रूढ़ हो गया है।

जीवन मूल्यों का वर्गीकरण एक और भी प्रकार से किया जाता है सामयिक जीवन मूल्य एवं शाश्वत जीवन मूल्य। सामयिक जीवन मूल्यों से तात्पर्य उन जीवन मूल्यों से है जो देश, काल व परिस्थिति सापेक्ष होते हैं। इसीलिए इन्हें कई बार समकालीन जीवन मूल्य भी कहा जाता है। ये देश या स्थान विशेष, समय विशेष एवं परिस्थिति विशेष में ही उपयोगी एवं प्रासंगिक होते हैं। समय, स्थान व परिस्थिति में परिवर्तन होने पर इनमें भी परिवर्तन होता है, या परिवर्तन होना चाहिए। यदि कोई समाज देश, काल के अनुसार इन जीवन मूल्यों में परिवर्तन नहीं करता और पुराने जीवन मूल्यों से ही चिपका रहता है तो उस समाज का विकास रुक जाता है और उसमें जड़ता आ जाती है। दूसरी ओर, शाश्वत जीवन मूल्य वे होते हैं जो देश, काल, परिस्थिति के परे सब स्थितियों में और सदैव प्रासंगिक होते हैं। इनको बार बार बदला नहीं जाता और बदला भी नहीं जाना चाहिए। ये पुरातन होते हुए भी सदैव नूतन बने रहते हैं, अतः इनमें निरन्तरता का प्रवाह अबाध गति से चलता रहता हैं, इसलिए ये समीचीन भी रहते हैं। हाँ इतना अवश्य है कि देश, काल व परिस्थिति के अनुसार इनकी व्याख्या एवं प्रयोग का विवेक विकसित करना होता है। यहाँ हम भारतीय सांस्कृतिक जीवनधारा के ऐसे ही कुछ जीवन मूल्यों की चर्चा करेंगे।

भारतीय जीवन मूल्य परम्परा में खण्डित यांत्रिक विश्व दृष्टि के स्थान पर एकात्म सर्वकश विश्व दृष्टि को स्वीकार किया गया है। अब तो विज्ञान की नवीनतम खोजों ने भी सिद्ध कर दिया है कि ब्रह्माण्ड के अलग-अलग दिखने वाले विभिन्न हिस्से एक-दूसरे के साथ गहरे एवं घनिष्ठ रूप से जुड़े एवं गुंथे हुए ही नहीं है अपितु एक-दूसरे के भीतर अंतर्भूत हैं। इसी में से अविभाज्य समग्रता (unbroken wholeness) की परिकल्पना का उदय हुआ है। इसीलिए तो भारतीय मनीषी 'यत्पिण्डे तत्ब्रह्माण्डे, यत्ब्रह्माण्डे तत्पिण्डे' (अर्थात् जो एक अणु में है वही ब्रह्माण्ड में है और जो ब्रह्माण्ड में है वही एक अणु में है) का उद्घोष करते रहे हैं। हमारा विश्वास रहा है कि सम्पूर्ण चराचर जगत में एक ही तत्त्व व्याप्त है - 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'। इसी आधार पर यह कहा गया कि व्यष्टि, समष्टि और सृष्टि ये अलग-अलग और स्वतंत्र इकाइयाँ नहीं हैं, अपितु एक ही तत्त्व भिन्न भिन्न स्तरों पर अपने को प्रकट किये हुए हैं। अतः इनके बीच एकलयता एवं एकरसता बनी रहनी चाहिए।

भारत ने प्रकृति के प्रति मातृत्त्व व देवत्त्व भाव दृष्टि रखने पर जोर दिया हैं। इसीलिए तो हमने धरती माता, गौमाता, तुलसी माता, गंगा माता, पहाड़ देवता, नदी देवता, नाग देवता आदि सम्बोधन देकर प्रकृति के प्रति आदर एवं आत्मीयता का भाव रखकर व्यवहार किया है। हम प्रकृति को अपना विरोधी व शत्रु नहीं मानते, अपितु उसके प्रति मित्र भाव रखते हैं। कोई अपनी माँ से कैसे प्रतियोगिता कर सकता है

? इसीलिए हम प्रकृति के शोषण का नहीं अपितु इसके दोहन का विचार करते हैं। इसी को ध्यान में रखकर हमें अपना समूचा जीवन व्यवहार और तकनीक- टेक्नोलोजी का निर्धारण करना चाहिए। हमारा मानना है कि मनुष्य, प्रकृति व पर्यावरण अविभाज्य हैं, अत: मनुष्य को प्रकृति के साथ तालमेल करते हुए रहना चाहिए। प्रकृति के विभिन्न अवयवों भूमि, जल, वायु, अग्नि, जीव-जन्तु, पेड़-पौधों को मिलाकर प्रकृति-चक्र, एक जीवन धारण प्रणाली बनती है जो इन सबके बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध को प्रकट करती है। इस प्रकृति चक्र का नेटवर्क ही आज कि भाषा में जैव विविधता हैं। हम इस प्रकृति चक्र को नष्ट न करें तभी हम प्रदूषण की समस्या का समाधान कर पर्यावरण संरक्षण कर पायेंगे।

भारतीय विचार परम्परा में मनुष्य के प्रति देखने का भी अपना एक विशेष दृष्टिकोण रहा है। हमने मनुष्य को सामाजिक पशु, राजनैतिक पशु, यांत्रिक मानव, जैविकीय इकाई, वैज्ञानिक मानव, आर्थिक मानव, आदि के रूप में नहीं देखा है। हमने तो उसे सर्वव्यापक ब्रह्म के स्वरूप में शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा, के समुच्चय एकात्म मानव के रूप में माना है। इस विचार परम्परा के अनुसार मनुष्य शरीर व बुद्धि का मिश्रण मात्र ही नहीं है अपितु उसमें आत्मा की शक्ति भी है जो शुद्ध, कल्याणकारक एवं दैवीय गुणों से परिपूर्ण है। अत: मनुष्य जहाँ अपने हृदय की दुर्बलताओं, मन की कमजोरियों एवं स्वार्थवृत्तियों के कारण समाज में अनेक समस्याओं को जन्म देता है वहीं यदि उसके अन्तस् की सद्वृत्तियों एवं देवत्त्व को जगाने एवं बढ़ाने का प्रयास किया जाए तो वह सब समस्याओं का सुन्दर-सुखकारक हल प्रस्तुत कर सामाजिक कल्याण का वाहक भी बन सकता है।

भारतीय चिंतन एक समग्र, समन्वित, संतुलित एवं समन्वयात्मक जीवन मूल्य की बात कहता रहा है। हमारा मानना है कि विविधता संसार का सत्य एवं सौन्दर्य दोनों है। हम विविधता में एकता का दर्शन करते रहे हैं। हमारी मान्यता रही है कि एक का ही विविध रूपों में प्रगटीकरण होता रहा है-एकोऽहं बहुस्याम। इसी में से विविधरूपी एवं बहुमुखी दृष्टिकोण, अविरोध भाव प्राप्त करने की पद्धति, बहुधाभाव की स्वीकृति, बहुधा में एकत्व की पहचान व खोज आदि जन्म लेते हैं। इसी जीवन मूल्य का परिणाम है कि हमारे यहाँ पूजा-पद्धति का स्वातंत्र्य रहा है और हमारा समाज व् परम्परा अनेक मत मतान्तरों का अद्भुत संगम के रूप में प्रतिष्ठित रहे हैं। 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति', यह भारतीय जीवन मूल्यों का अन्तर्यामी सूत्र रहा है और इसी में से 'स्यादवाद के सिद्धांत कि उत्पति हुई है। अनेक चिन्तन धाराओं को मान्य कर उनके भीतर अंतर्निहित समान तत्त्वों को खोज लेना यह सामाजिक एकता-समरसता के लिए आवश्यक है। साथ ही विभिन्नताओं-विविधताओं में से कटुता व संघर्ष उत्पन्न न होने देना ही भारत की सामाजिक दृष्टि रही है। हम वर्ग-संघर्ष में नहीं बल्कि वर्ग-सहयोग एवं वर्ग-पूरकता के पक्षपाती हैं। हमारी निष्ठा है कि सम्पूर्ण समाज के विकास के लिए सभी वर्ग आवश्यक एवं उपयोगी होते हैं। हम कभी भी किसी एक वर्ग के हितों की बलि चढ़ाकर किसी दूसरे वर्ग को बढ़ावा देने के पक्षपाती नहीं रहे हैं। इसीलिए हमने सदैव समाज के विभिन्न वर्गों व हितों के बीच सुंदर-सुखद, सुमेल एवं समन्वय बनाने का प्रयास किया है। इस प्रकार इस भारतीय जीवन मूल्य के प्रकाश में हमें ऐसी सामाजिक संरचना विकसित करने का प्रयास करते रहना चाहिए जिसमें धन व धर्म, भौतिकता एवं आध्यात्मिकता, संचय व त्याग, अर्जन और वितरण, व्यष्टि और समष्टि, निजी हित एवं सार्वजनिक हित, स्वतन्त्रता एवं नियमन आदि अनेक तत्त्वों के बीच उचित समन्वय स्थापित किया जा सके।

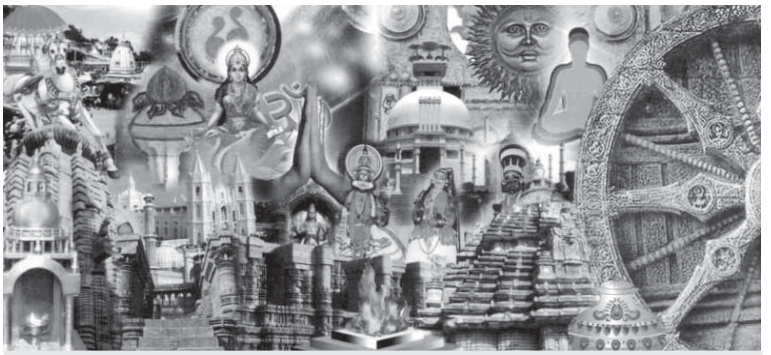

भारतीय चिंतन एक समग्र, समन्वित, संतुलित एवं समन्वयात्मक जीवन मूल्य की बात कहता रहा है। हमारा मानना है कि विविधता संसार का सत्य एवं सौन्दर्य दोनों है। हम विविधता में एकता का दर्शन करते रहे हैं। हमारी मान्यता रही है कि एक का ही विविध रूपों में प्रगटीकरण होता रहा है-एकोऽहं बहुस्याम।

हमारे जीवन मूल्यों में हमने सबसे ज्यादा जोर आचार प्रधान जीवन दृष्टि एवं जीवन व्यवहार पर दिया है। इस दृष्टि से हमारी परम्परा में पति-पत्नी, माता-पिता, भाई-बहिन, महिला-पुरुष के रिश्तों की मर्यादाओं, सत्य, शील ,दया, पवित्रता, दान परोपकार, सेवा, संयम, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, त्याग-समर्पण, संतोष, समदृष्टि आदि सदगुणों को अपनाने पर काफी बल दिया गया है। इन गुणों के कारण ही हमारा चरित्र बनता है।

आज आवश्यकता है कि हम अपने जीवन मूल्यों को ठीक से समझें और जीवन में अपनाने का प्रयास करें। यह हो सकता है कि आज के सुविधाभोगी वातावरण में इन जीवन मूल्यों को अपनाना कठिन लगे अथवा प्रारम्भ में कुछ कष्ट उठाना पड़े। किन्तु यदि हम दृढ संकल्प के साथ इन जीवन मूल्यों को अपनाना प्रारम्भ कर देंगे तो फिर ये हमें सहज, सरल, स्वाभाविक एवं सुखद लगने लगेंगे। इससे हमें आत्मसंतोष का अनुभव होने लगेगा और फिर हम व्यक्तिगत एवं सामाजिक अनेक सवालों एवं समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सकने कि क्षमता भी प्राप्त कर सकेंगे। ❑

(प्रसिद्ध मौलिक विचारक-चिन्तक, विश्लेषक)

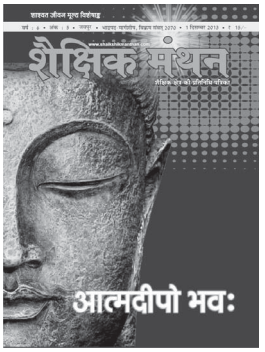

पृथ्वी को जीवन योग्य बनाए रखने की जिम्मेदारी मनुष्य की है। यह तभी सम्भव है जब मनुष्य मात्र में आपसी विश्वास बना रहे। सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, दान, जप, तप, यम व नियम आदि शाश्वत या सनातन जीवन मूल्यों के प्रतिपादन का उद्देश्य वसुधैव कुटुम्बकम की स्थिति को प्राप्त करना ही रहा है। इनके पालन से संस्कृति की उत्पति होती है। भारतीय संस्कृति के सनातन होने का रहस्य उसके विश्वासों की वैज्ञानिकता में छिपा है।

शाश्वत जीवन मूल्यों की वैज्ञानिकता

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

शाश्वत या सनातन जीवन मूल्य का अर्थ उन सामाजिक मान्यताओं से है जो समय और स्थान के साथ बदले नहीं। भारत ने अत्यन्त प्राचीनकाल में ही इनका आविष्कार कर लिया गया था और कोई नहीं जानता कि ये कब से प्रचलन में हैं। सम्भवत: इसी कारण इन्हें सनातन धर्म भी कहा जाता है। भारत में धर्म का अर्थ व्यक्तिगत आस्था, पूजा पद्धति या कर्मकाण्ड से नहीं होकर मानवीय कर्त्तव्यों या जीवन मूल्यों से ही रहा है। गीता में धर्म शब्द का उल्लेख इसी सन्दर्भ में हुआ है।

प्रकृति के जीवन मूल्य

शाश्वत या सनातन जीवन मूल्यों का प्रारम्भ विज्ञान के सन्दर्भ में ही हुआ होगा। हम पृथ्वी के वासी हैं। अनन्त ब्रह्माण्ड की तुलना में पृथ्वी का अस्तित्व एक कण भर भी नहीं होगा। ब्रह्माण्ड की संरचना व संचालन जिन नियमों से होता हैं उन्हीं से पृथ्वी भी चलती हैं। वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया है कि प्रकृति के अपने लगभग 200 सनातन जीवन मूल्य हैं। हम अगर इस धरा पर जीवित हैं तो मात्र इस कारण से कि प्रकृति अरबों वर्षों से अपने सनातन जीवन मूल्यों का अविरल रूप से पालन करती आ रही है।

आज विज्ञान का बोलबाला है। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी द्वारा उत्पन्न उपकरणों की क्षमताओं से आज का समाज चमत्कृत है। इसका अर्थ यह निकाला जा रहा है कि मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करली है। किसी छोटे स्तर पर बात करें तो कुछ ठीक लगता है मगर सम्पूर्ण पृथ्वी के सन्दर्भ में बात करें तो यह सही नहीं है। सर्न में हिग्सबोसोन या ब्रह्मकणों का अस्तित्व प्रमाणित होने पर हिग्स तथा इंग्लर्ट को नोबल पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया है। इसे प्रकृति को जानने की ओर एक और कदम ही माना जा सकता है। ब्रह्माण्ड कैसे बना इस विषय में मानव का ज्ञान अभी बहुत कम है। जीवन कैसे उत्पन्न हुआ? प्रथम कोशिका कैसे बनी ? आदि प्रश्नों के विषय में कुछ अनुमान ही उपलब्ध है । सत्य क्या है यह कोई नहीं जानता।

शाश्वत जीवन मूल्यों की बात मानव के सन्दर्भ में ही की जाती है क्योंकि मानव प्रकृति की उपज होने के बावजूद अपनी बुद्धि के बल से प्रकृति के विपरीत जाने की क्षमता रखता है। मनुष्य के अतिरिक्त अन्य किसी प्राणी को ईश्वर ने प्रकृति के विपरीत जाने की क्षमता नहीं दी है। मानव के अतिरिक्त सभी प्राणी अर्थात पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, कीट पतंगे, सूक्ष्मजीव आदि अपना जीवन प्रकृति से प्राप्त जन्मजात प्रवृतियों के अनुरूप चलाते हैं। प्रारम्भ में मानव का व्यवहार भी प्रकृति की सीमा में जन्मजात प्रवृतियों से संचालित होता रहा होगा। मानव ने प्रकृति की शक्ति को स्वीकारा और उसी के अनुरूप चलने में भलाई समझी। प्रकृति के घटकों जैसे वायु, पवन, जल, वर्षा, सूर्य, चन्द्रमा, धरती आदि की शक्ति व मानव जीवन में उनके महत्व को जानकर उन्हें देवता स्वीकार कर लिया। उनको मानव रूप दे देवताओं की तरह पूजने लगे। आगे जाकर यह हुआ कि हमने प्रकृति के महत्व की उपेक्षा कर दी और केवल देवताओं को पूजना जारी रखा। आज भी वही हो रहा है। इससे सब हानि हो रही है। गंगा को माँ मानने का अर्थ यह कि हमारे लालन पालन में गंगा का महत्व माँ के बराबर है। हमें इसे हानि नहीं पहुँचानी चाहिए है। हर सम्भव उपाय द्वारा गंगा को सुरक्षित रखना चाहिए। इससे प्राप्त संसाधनों को गंगा का प्रसाद मान कर ग्रहण करना चाहिए। हमने ऐसा कुछ नहीं किया अपितु पूजा के नाम पर गंगा को गंदा करते रहे हैं। गंगा के संसाधनों की लूट-खसोट आज भी जारी है। परिणाम हमारे सामने हैं।

यही बात धरती के विषय में हैं। साधारण पढ़ा लिखा विद्यार्थी भी यह जानता है कि चींटी से लेकर हाथी तक का पेट धरती ही भरती है। धरती सही है तो दूध, अन्न, फल, फूल सभी शुद्ध मिलेगा। हमारा लालन पालन सही होगा। धरती को माता मानने का निर्णय हमारा जीवन मूल्य बना तो हमारे अपने भले के लिए बना। धरती ने कभी नहीं कहा कि मुझे माँ कहो, मेरी पूजा करो। जब तक हमने उस जीवन मूल्य का सही सही पालन किया, हमें कभी यह सोचने की आवश्यकता नहीं रही कि हमारे खाद्य पदार्थ प्रदूषित तो नहीं है। उसमें कहीं

कोई अज्ञात जहर तो नहीं है ?

अन्तरिक्ष केन्द्र के वासी

अन्तरराष्ट्रीय अन्तरिक्ष केन्द्र के रूप में पृथ्वी से बाहर एक अलग दुनिया बसाने में मानव कामयाब रहा है। अब पृथ्वी से दूर मंगल गृह पर मानव बस्ती बसाने के प्रयास तेज हो गए हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि हम प्रकृति से ऊपर हो गए हैं। सुनिता विलियम्स जैसे कई विज्ञानी अन्तरराष्ट्रीय अन्तरिक्ष केन्द्र पर रहने जाते हैं तो जाने पूर्व उन्हें वहाँ रहने का अभ्यास कराया जाता है। नियम सिखाए जाते हैं। वे लोग पूर्ण निष्ठा से उन मूल्यों का पालन करते हैं। भोजन, हवा, पानी आदि के लिए वे पृथ्वी से की गई आपूर्ति पर निर्भर रहते हैं।

हम पृथ्वीवासियों की परेशानी यह है कि हम यह भूल गए हैं कि हम भी एक बड़े अन्तरिक्ष स्टेशन पर रह रहे हैं जो सूर्य की कक्षा में स्थित है। हमारे इस यान में पानी, हवा, खनिज आदि का भण्डार सीमित है। अब तब हम इन संसाधनों को संभल कर काम में लेते रहे हैं। उन संसाधनों का पुनः चक्रण करते रहे हैं। परेशानी तब उत्पन्न हुई जब हम स्वनियन्त्रण की बातों को भूलकर मनचाहा व्यवहार करने लगे।

शाश्वत विकासः समझो और करो

भारत में जनता से कभी यह अपेक्षा नहीं कही गई कि वह हर पुरानी बात को आँख बन्द कर स्वीकार कर ले। यह अपेक्षा जरूर की गई कि बात को समझो और फिर व्यवहार करो। परेशानी तब उत्पन्न हुई जब हमने सोचना समझना छोड़ मनचाहा व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया। क्या हर पुरानी बात को बिना सोचे समझे ही अन्धविश्वास मानने लगे। इसे वैज्ञानिकता नहीं कहा जा सकता? विज्ञान इसकी अनुमति नहीं देता।

पृथ्वी को जीवन योग्य बनाए रखने की जिम्मेदारी मनुष्य की है। यह तभी सम्भव है जब मनुष्य मात्र में आपसी विश्वास बना रहे। सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, दान, जप, तप, यम व नियम आदि शाश्वत या सनातन जीवन मूल्यों के प्रतिपादन का उद्देश्य वसुधैव कुटुम्बकम की स्थिति को प्राप्त करना ही

रहा है। इनके पालन से संस्कृति की उत्पति होती है। भारतीय संस्कृति के सनातन होने का रहस्य उसके विश्वासों की वैज्ञानिकता में छिपा है। परेशानी यह है कि आज हम उस वैज्ञानिकता से दूर चले जा रहे हैं। हम बात शाश्वत विकास (सस्टेनेबल डवलपमेन्ट) की करते हैं और आचरण उपभोक्तावादि रखते हैं। यह कौन सा विज्ञान है ?

परेशानी यह है कि आज का राजनैतिक नेतृत्व समस्या समाधान के नाम पर घड़ियाली आंसू बहा रहा है। स्थानीय से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक की समस्याओं का कारण पारस्परिक अविश्वास ही है। कुछ लोग समस्याओं के लिए विज्ञान को दोषी ठहराने का प्रयास करते हैं जबकि ऐसा कहना उचित नहीं है। विज्ञान तो एक संसाधन मात्र है। उसका उचित या अनुचित उपयोग करना संस्कृति पर निर्भर करता है। आज संस्कृति पर बाजार हावी होता जा रहा है। युवा वर्ग संस्कृति से अधिक बाजार से प्रभावित लगता है। वह बात भूल गया है कि हम एक अन्तरिक्ष-यान में बैठे हैं। शाश्वत या सनातन जीवन मूल्य का पालन नहीं करने पर हमारे साथ पृथ्वी के समस्त जीवों का जीवन संकट में पड़ता जा रहा है। हजारों प्रजातियों का अस्तित्व मानव के कारण समाप्त हो गया है।

वैज्ञानिक नियमों के पालन का महत्व जानता है। विज्ञान हमेशा नियमों का पालन करने में विश्वास करता है। आज के सामाजिक जीवन को लेकर वैज्ञानिक परेशान हैं कि यह हो क्या रहा है? वैज्ञानिक जानता है कि सूर्य अपने शाश्वत या सनातन जीवन मूल्यों से थोड़ा भी विचलित हो जावे तो पृथ्वी पर हमारा जीवन असम्भव हो जाएगा। सूर्य अरबों वर्षो से उसके सनातन धर्म का पालन कर रहा है। हमारे शरीर की कोशिकाएं अपने जीवन मूल्यों का पालन कर पाती है तब तक ही हम स्वस्थ रहते हैं।

प्रकृति अपने शाश्वत या सनातन जीवन मूल्यों का पालन करती है तो हम क्यों नहीं करते? विज्ञान व धर्म में कोई विवाद नहीं है। दोनों का उद्देश्य सत्य की खोज करना है। सत्य एक ही होता है। विज्ञान ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहा है, वह आध्यात्मिकता के पास आता जा रहा है। अद्वैतवाद में विज्ञान का विश्वास बढ़ता जा रहा है। आज के युवाओं को तात्कालिकता के आकर्षण से निकल कर शाश्वतता का दामन थामना होगा। युवा पीढ़ी को सही ढ़ंग से यह बात बतलाई जाने तो वह इस बात को अवश्य समझेगा कि आज की तुलना में कृष्ण के समय में मानव अधिक सुरक्षित व सुखी था। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

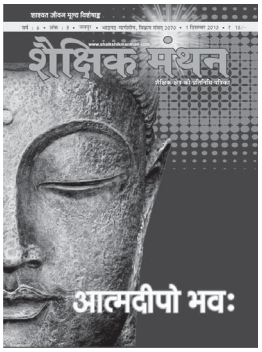

देश का नेतृत्व शिक्षा के माध्यम के रूप में एक विदेशी भाषा का लोभ, स्वतंत्रता के 66 वर्षों के पश्चात् भी छोड़ ही नहीं पा रहा है। भाषा तो संस्कृति की वाहक होती है। विद्यार्थी यदि देशी के बजाय इतर भाषा में शिक्षा लेगा तो उस भाषा की संस्कृति भी ग्रहण करेगा। फिर वे ऋणात्मक प्रवृत्तियां तो, जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है, समाज में उभरेगी ही, क्योंकि संभव है कि उस भाषा के अपने देश के जीवन-मूल्य कुछ भिन्न हैं।

भारतीय जीवन मूल्य से दूर वर्तमान शिक्षा

❑ डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल

यदि भारत में एक दो नहीं, असंख्य मार्गदर्शकों ने जन्म लिया है तो इसका श्रेय आदि काल से यहाँ चली आ रही उस शिक्षा पद्धति को है जिसमें सदैव से उच्चतम कोटि के मानवीय जीवन मूल्य समाहित रहे हैं। गुरुकुलों में गुरुओं के श्री चरणों में बैठ कर जो शिक्षा ग्रहण की जाती थी, उससे सहज ही विद्यार्थी में त्याग, बड़ों के प्रति आदर, रिश्तों का सम्मान, मितव्ययता एवं कठोर अनुशासन आदि गुण पनपते थे। शिक्षा में अध्यात्मिकता का पुट उसे शांत, आत्मविश्वासी नम्र और अंतरोन्मुखी बनाने के साथ सामाजिक नियमों के अनुपालन तथा अन्याय एवं अत्याचार से संघर्ष के लिये सक्षम बनाते थे। मासिक वृत्ति पर निर्भर न रहने वाले गुरुजन शिक्षार्थी का व्यक्तित्व आदर्श बना देते थे। इसीलिये इस देश की संस्कृति में संयमन, नियमन, सर्वधर्म और समभाव की गरिमा रही है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि यहाँ न तो कभी शिक्षा का दृष्टिकोण व्यापारिक था और न ही उसका उद्देश्य छात्र के मस्तिष्क में विषय की जानकारी ठूंस-ठूंस कर भर देना मात्र था।

समय के साथ-साथ और विशेषकर अंग्रेजों के आगमन के साथ परम्परायें टूटने लगीं और अंततः शिक्षा का वह स्वरूप उभरा जिसे आज हम आधुनिक शिक्षा के नाम से जानते हैं। अब शिक्षा का उद्देश्य कुछ के लिये (गुरुओं और प्रबंधकों) केवल धनोपार्जन तथा कुछ अन्यों (विद्यार्थियों) के लिये विद्यालयों से निकलने के बाद जीवन वृत्ति के लिये तैयार होना मात्र रह गया है और इस आपाधापी में भारतीय जीवन मूल्य खो से गये हैं। रही सही कसर 'सेकुलरिज्म' के भूत ने निकाल दी है। इसी का परिणाम है कि समाज में अपराध बढ़ते जा रहे हैं और उनके विरुद्ध बोलने और खड़ा होने का सामर्थ्य न तो नागरिकों में दिखाई पड़ता है और न ही प्रशासकों में। कामचोरी बढ़ गई है, सेक्स अपराध चरमोत्कर्ष पर हैं, समाज में बड़ों की अवहेलना, लोगों में दया का अभाव एवं अत्यधिक लालच जोर शोर से पनप रहे हैं।

यदि हम आज से 25-30 वर्ष पूर्व की शिक्षा की ही बात करें तो भी हम पायेंगे कि प्रारंभिक शिक्षा (दसवीं तक) की हिंदी, अंग्रेजी तथा अन्य प्रासंगिक विषयों की पुस्तकों में विषय के प्रतिपादन के लिये पौराणिक कथाओं, धार्मिक बिंबों आदि का पर्याप्त समावेश रहता था। घरों में परम्परायें यथेष्ट जीवित रहने के कारण इस प्रकार से विद्यार्थी को विषय समझने में तो आसानी होती ही थी, उसका व्यक्तित्व भी सुधरता था। कुछेक उदाहरण पर्याप्त होंगे।

रामायण के राम और जटायु का प्रसंग विद्यार्थी में जीवों के प्रति दया का संदेश देता है तथा लंका पहुंचने के लिये बाण के प्रहार से समुद्र को सुखा देने की अपेक्षा राह देने के लिये उसकी अभ्यर्थना प्रकृति के साथ सहअस्तित्व की प्रेरणा। दधीचि का इंद्र द्वारा प्रार्थना किये जाने पर अपनी ही अस्थियों का समर्पण जहाँ असीम त्याग एवं परोपकार को स्थापित करता है वहीं हरिश्चन्द्र की कथा सत्यकथन और लालचविहीन कर्मठता का आदर्श प्रसतुत करती है। गणपति का आख्यान माता-पिता के प्रति आदर और उनकी असीम भक्ति का संदेश देता है तथा लक्ष्मण और भरत का चरित्र मानवीय गुणों की उत्कृष्टता दर्शाता है। महाभारत के शिशुपाल वध का प्रसंग निश्चित ही सहनशीलता और धैर्य को व्यक्तित्व में प्रतिष्ठित कर सकता है, जो अंततः अन्याय के विरोध के गुण का भी उत्सर्जन करेगा।

परंतु यह सब होगा तो तब जब हम सेकुलरिज्म की सही व्याख्या करें! आज की गलत व्याख्या शिक्षाविदों को इन बातों का पाठ्यपुस्तकों में समावेश करने से रोकती है। अभी कुछ दिन पहले की बात है कि आई.ए.एस ट्रेनिंग की एक पाठ्य-पुस्तक के एक अध्याय में साम्यवादी श्री

अंततः शिक्षा का वह स्वरूप उभरा जिसे आज हम आधुनिक शिक्षा के नाम से जानते हैं। अब शिक्षा का उद्देश्य कुछ के लिये (गुरुओं और प्रबंधकों) केवल धनोपार्जन तथा कुछ अन्यों (विद्यार्थियों) के लिये विद्यालयों से निकलने के बाद जीवन वृत्ति के लिये तैयार होना मात्र रह गया है और इस आपाधापी में भारतीय जीवन मूल्य खो से गये हैं। रही सही कसर 'सेकुलरिज्म' के भूत ने निकाल दी है।

सीताराम येचूरी को धर्मनिरपेक्षता के भूत से साक्षात्कार हो गया और अंततः वह पाठ निकाल देना पड़ा। लेखक को याद है कि उसकी ग्यारहवीं कक्षा की एक अंग्रेजी पुस्तक का प्रारंभ श्रीमती सरोजनी नायडू की कविता Fluterlayer of Vrindavan से हुआ था। आज के युग में यह संभव है क्या?

प्रारम्भिक शिक्षा के बाद कॉलेज में पहुंचने के बाद भी आधुनिक शिक्षा के इस स्वरूप के चलते विद्यार्थी एक परिपक्व एवं समाजदर्शी से प्रेरित व्यक्तित्व का स्वामी नहीं बन पाता। और फिर, वहां विषय विशेष के गहन अध्ययन के चक्कर में एक मशीनी मानव बन जाता है। वह विषय के क्षेत्र में प्रतिभा का संग्रहण तो कर लेता है पर जीवन-मूल्यों का क्या जो उसे मिल ही नहीं पाये। फिर वह यदि लालची, भ्रष्टाचारी, धन संग्रहण के एकमात्र उद्देश्य वाला निकृष्ट मानव बन जाये तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है?

इस देश के पारम्परिक जीवन-मूल्यों के ह्रास का एक कारण यह भी है कि 14 पूर्ण विकसित भाषाओं वाले इस देश का नेतृत्व शिक्षा के माध्यम के रूप में एक विदेशी भाषा का लोभ, स्वतंत्रता के 66 वर्षों के पश्चात् भी छोड़ ही नहीं पा रहा है। भाषा तो संस्कृति की वाहक होती है। विद्यार्थी यदि देशी के बजाय इतर भाषा में शिक्षा लेगा तो उस भाषा की संस्कृति भी ग्रहण करेगा। फिर वे ऋणात्मक प्रवृत्तियां तो, जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है, समाज में उभरेगी ही, क्योंकि संभव है कि उस भाषा के अपने देश के जीवन-मूल्य कुछ भिन्न हैं। आज के युवकों में विदेशी खानपान, संगीत, नृत्य, चारित्रिक विशिष्टताओं आदि के प्रति बढ़ता आग्रह क्या यह बात सिद्ध नहीं करता?

समय अभी भी है। हम लौट सकते हैं। केवल पिछले 100-150 वर्षों में उभरे अपने पूर्वाग्रहों को छोड़ना होगा। स्मरणीय है कि कविवर श्री रामधारी सिंह दिनकर ने कभी लिखा था- *परम्परा जब लुप्त होती है सभ्यता अकेलेपन के दर्द से मरती है पानी को गहरा बनाना यह परम्परा का काम है परम्परा चीनी नहीं मधु है, वह न हिन्दू है, न मुसलमान है।* ❑

(पूर्व अध्यक्ष-रसायन विभाग, महर्षि दयानन्द वि.वि. रोहतक एवं पूर्व अध्यक्ष-रसायन इंडियन साईंस कांग्रेस)

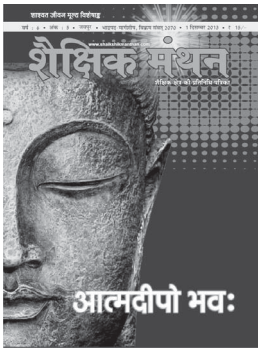

औपचारिक शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से जीवन शाश्वत मूल्यों का संरक्षण, संवर्द्धन व सम्प्रेषण होता है, शिक्षण संस्थाओं में मूल्य परक शिक्षा के विविध आयामों पर चर्चा करने से पूर्व अधिगम के अर्तगत तीन पक्षों - ज्ञान अर्जित करना, अनुभव करना व क्रिया करना है। इन पर चर्चा होनी चाहिए। इसी के द्वारा शिक्षा के प्रयास सार्थक हो सकेंगे। आवश्यक जीवन मूल्यों का परिचय विद्यार्थियों को हो सके, इसके लिए विभिन्न विषयों की पाठ्य पुस्तकों में जीवन के शाश्वत मूल्यों पर आधारित पाठों का समावेश किया जाना चाहिए।

बाजार से दिग्भ्रमित परिवार

❑ डॉ. मधुर मोहन रंगा

भारतीय परिप्रेक्ष्य पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि - तीव्रगति से हो रहे भौतिक बदलाव ने जीवन के शाश्वत मूल्यों को बहुत पीछे धकेल दिया है। आज यदि जीवन मूल्यों के बारे में बात करें तो लगता है कि जैसे उपहास उड़ाया जा रहा है, आज आम धारणा बन गई है कि इस युग में शाश्वत जीवन मूल्यों पर चल पाना संभव नहीं है। जब हम जीवन मूल्यों का स्मरण करते हैं तो ध्यान आता है कि सच्चाई, ईमानदारी, अग्रजों का आदर, आर्थिक सुचिता, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि जीवन मूल्य है। मूल्य का सामान्य अर्थ किसी वस्तु, स्थान आदि की क्रय क्षमता से लगाया जाता है। परन्तु वास्तव में 'मूल्य' वह गुण या तत्व है जिसके कारण किसी वस्तु का महत्त्व या मान होता है। 'मूल्य' संवेगों से युक्त होते हैं, इन्हीं संवेगों से प्रेरित होकर मनुष्य मूल्यों की ओर अग्रसर होते हैं। ''मूल्य'' संतोष की अनुभूति करवाने वाले होते हैं। जिन कार्यों और अनुभवों से व्यक्ति संतोष प्राप्त करता है, वे ही उसके मूल्यों के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। मूल्य मूलत: दो प्रकार के होते हैं सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक - ये शाश्वत जीवन मूल्य हैं जो देश, काल, स्थिति के अनुसार परिवर्तित नहीं होते हैं, जब कि परिवर्तनशील वे शाश्वत मूल्य हैं, जो समाज, राष्ट्र, काल व स्थिति के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं।

आज पूरे विश्व में उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण मानवता का ध्रुवीकरण, 'विश्व एक परिवार' व 'विश्व एक बाजार' के दो ध्रुवों की ओर जा रहा है। घर-परिवार तथा बाज़ार के नियम एक दूसरे से अलग ही नहीं, वरन् एक दूसरे के विरुद्ध भी हैं। घर-परिवार को नियंत्रित एवं नियमित करने वाला स्नेह या प्रेम है, जबकि बाजार प्रतिस्पर्द्धा व धूर्तता द्वारा प्रेरित होता है। घर-परिवार मानवीय संवेदनाओं की एकरूपता द्वारा निर्मित होता है, जबकि बाज़ार का निर्माण आपसी विपरीत रुचियों पर निर्भर रहता है। परिवार भाव आपसी सहयोग, सहअस्तित्व, सम्पर्क व समन्वय पर आधारित है, जबकि बाज़ार पारस्परिक शोषण की नीति को मान्यता देता है व उपभोक्तावाद को पोषण प्रदान करता है। घर-परिवार 'मूल्य' आधारित उपयोग को मान्यता देता है। आज मानवता के सम्मुख यक्ष-प्रश्न विद्यमान है, इन दोनों में से किस का अनुसरण करें? कौन से विश्व दृष्टिकोण को स्वीकार किया जाए? यह प्रश्न इसलिए उठ रहे हैं, क्योंकि हमने हमारे प्राचीन शाश्वत जीवन मूल्यों की अनदेखी की है। शाश्वत जीवन मूल्य तो अनादि काल से मानवता का पथ आलोकित करते आ रहे हैं, इसी कारण आज भी श्रेष्ठ व प्रासंगिक हैं। इसलिए इनका अनुसरण करने से ही मानवता पुन: समृद्धिशाली होगी।

शाश्वत जीवन मूल्यों का व्यक्ति के जीवन में अनवरत प्रवाह में शिक्षा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार ''शिक्षा मनुष्य में अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना है।'' आवश्यकता इस बात की है कि उसे उचित वातावरण मिले। जिस प्रकार एक बीज में वृक्ष छिपा रहता है जब उसे उचित वातावरण मिलता है तब वह विशाल वृक्ष के रूप में परिवर्तित हो जाता है। मानव की प्रथम गुरु उसकी माता होती है, माता शिशु की भ्रूणावस्था से ही स्वयं के विचार एवं व्यवहार द्वारा उसमें शिक्षा का बीजारोपण करती है। यदि माता हमारे प्राचीन संस्कृति के साहित्य का अध्ययन, श्रवण-चिंतन, मनन करती है, स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचारों की अभिव्यक्ति करती है, सामाजिक कुरीतियों का खण्डन करती है, सभी सदस्यों के मध्य सम्पर्क, सहयोग व समन्वय रखती है, तो उसकी संतान में भी इन मूल्यों का सम्प्रेषण होता है, जैसा भक्तराज प्रहलाद एवं चक्रव्यूह भंजक अभिमन्यु के उदाहरणों से स्पष्ट है। जिस प्रकार पिता नैतिक मूल्यों को अपने जीवन में ढाल लेते हैं, शिक्षा दीक्षा की आदि की समभाव से व्यवस्था करते हैं, सामाजिक रुढ़ियों को तोड़कर परम्पराओं की स्थापना करते हैं, भारतीय सभ्यता, संस्कृति व महापुरुषों के योगदान का अनुसरण

कर कार्य योजना बनाते हैं, तो संतान में स्वत: ही जीवन मूल्यों का प्रादुर्भाव हो जायेगा। औपचारिक शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से जीवन शाश्वत मूल्यों का संरक्षण, संवर्द्धन व सम्प्रेषण होता है, शिक्षण संस्थाओं में मूल्य परक शिक्षा के विविध आयामों पर चर्चा करने से पूर्व अधिगम के अर्तगत तीन पक्षों – ज्ञान अर्जित करना, अनुभव करना व क्रिया करना है। इन पर चर्चा होनी चाहिए। इसी के द्वारा शिक्षा के प्रयास सार्थक हो सकेंगे। आवश्यक जीवन मूल्यों का परिचय विद्यार्थियों को हो सके, इसके लिए विभिन्न विषयों की पाठ्य पुस्तकों में जीवन के शाश्वत मूल्यों पर आधारित पाठों का समावेश किया जाना चाहिए। सभी विषयों में भारतीयों के योगदान व भारतीय चिंतन का समावेश किया जाय। जिससे स्वाभीमान विकसित होगा व उनके योगदान के स्मरण मात्र से ही आने वाली पीढ़ियों को दिशा मिलेगी। शिक्षण कार्य के साथ-साथ विद्यार्थियों में बाह्य अभिरुचियों अभिवृत्तियों का विकास आवश्यक है। यथा भारतीय संस्कृति का, नागरिक शास्त्र के माध्यम से हमारे संवैधानिक मूल्यों-स्वतंत्रता, समानता, पंथ निरपेक्षता आदि का, सामाजिक ज्ञान द्वारा सांस्कृतिक संरक्षण हेतु वेदों, पुराणों, महाभारत, रामायण, गीता आदि विभिन्न धर्म ग्रंथों का परिचय कथाओं के रूप में दिया जा सकता है। भाषा का साहित्य तो विविध प्रकार के मूल्यों से परिपूर्ण रहता ही है – चाहे वह राष्ट्र प्रेम, मनुष्य प्रेम, जीव-जंतु, या वनस्पति प्रेम हो, चाहे सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन, विद्यार्थियों में जोश, वीरता, दृढ़ता, उत्साह, करुणा, दया, ममता, संवेदनशीलता का विकास, समस्त प्रकार के मूल्यों का परिचय साहित्य के माध्यम से हो सकता है। महान् महापुरुषों, महीयसी महिलाओं की जयंतियाँ, पुण्य तिथियाँ, विभिन्न क्षेत्रों में उनकी श्रेष्ठता, जिसके कारण उन्हें राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान मिला, विविध उत्सवों, समारोह आदि का उद्देश्योधारित, मूल्य परक, सुनियोजित आयोजन करना, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं धार्मिक प्रवृत्तियों के आयोजन भी मूल्य प्रदाता होते हैं, वीर रस कविता श्रवण कर स्नायुओं में नवीन स्पन्दन विकसित होते हैं, वन भ्रमण, सामूहिक प्रार्थना, खेलकूद, सामाजिक कार्यक्रम आदि पारस्परिक सदभाव, उत्पादन प्रवृत्ति व श्रम के प्रति निष्ठा आदि मूल्यों का पोषण करते हैं।

आधुनिकता के परिदृश्य में हमें प्रदर्शन का मोह छोड़ना, स्वकेन्द्रित प्रवृति का त्याग, प्राचीन परम्पराओं का सम्मान, भौतिकवादी दृष्टिकोण को कम करना, श्रम के प्रति निष्ठा विकसित करना, बड़ों के प्रति श्रद्धा व सम्मान सेवा भावना का सोच भारतीय प्राचीन साहित्य व पर्यावरण का मर्यादित उपयोग, खान-पान, भाषा, आचरण में सदाचार आदि सभी गुणों को प्राचीन शाश्वत जीवन मूल्यों के द्वारा ही प्राप्त कर सकते हैं, उसमें शिक्षा की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। जीवन के शाश्वत मूल्यों के द्वारा ही वीर्यवान् तेजस्वी श्रद्धासम्पन्न और पूर्ण प्रामाणिक नव युवकों का निर्माण हो सकता है। जो भारत के सर्वांगीण विकास के उद्देश्य को लेकर अग्रसर होंगे, आइये, ऐसे नवयुवकों का निर्माण में सहयोग प्रदान करें। इसलिए यह सोच कि शाश्वत जीवन मूल्यों की अब प्रासंगिकता नहीं है, उचित नहीं है। ये जीवन मूल्य अनादि काल से मानवता को पाथेय प्रदान कर रहे हैं व करते रहेंगे, आवश्यकता इस बात की है कि हम उनका संरक्षण व संवर्द्धन करें। ❑

(अध्यक्ष, राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय))

घर-परिवार मानवीय संवेदनाओं की एकरूपता द्वारा निर्मित होता है, जबकि बाज़ार का निर्माण आपसी विपरीत रुचियों पर निर्भर रहता है। परिवार भाव आपसी सहयोग, सहअस्तित्व, सम्पर्क व समन्वय पर आधारित है, जबकि बाज़ार पारस्परिक शोषण की नीति को मान्यता देता है व उपभोक्तावाद को पोषण प्रदान करता है। घर-परिवार 'मूल्य' आधारित उपयोग को मान्यता देता है। आज मानवता के सम्मुख यक्ष-प्रश्न विद्यमान है, इन दोनों में से किस का अनुसरण करें?

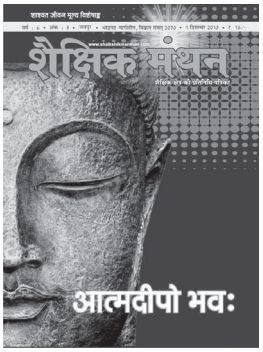

भारतीय संस्कृति - जीवन मूल्यों के रक्षण से संभव

❑ बजरंग प्रसाद मजेजी

जीवन मूल्य विशाल क्षेत्र वाला शब्द है। मानव जिन मूल्यों, आदर्शों, मान्यताओं, सामाजिक मान्यताओं को ग्रहण कर सर्वतोन्मुखी विकास के लिये आचरणों को आत्मसात कर जीवन के आदर्श व्यक्तित्त्व के प्रत्येक परिपेक्ष्य में व्यवहार करते हैं, यही जीवन मूल्य हैं। इन मूल्यों का सीधा सम्बन्ध आचरण तथा संस्कार से माना जाता है। इसका अर्थ यह है कि उचित -अनुचित की भावना, आज्ञापालन, उत्तरदायित्त्व, आत्मविश्वास, सहिष्णुता, दया, सहयोग, आत्मनियंत्रण, सत्य-असत्य का ज्ञान, निष्पक्षता, विश्वसनीयता, अनुशासन जैसे गुण जीवन-मूल्य के कारण हैं। ऐसे गुणों को धारित करने वाले जीवन मूल्य ही जीवन जीने के सूत्र एवं आधारभूत कौशल होते हैं। सांस्कृतिक, नैतिक, आध्यात्मिक एवं चरित्र निर्माण मूल्यों को जीवन में प्रतिष्ठित करना जीवन मूल्यों का लक्ष्य और मूल्यों का विकास करना होता है। सच्चे जीवन कर्त्तव्य निर्वाह के लिये जीवन मूल्यों की आवश्यकता होती है। यही वास्तव में आदर्शों, मान्यताओं, परिष्कृत आचरणों को ग्रहण कर आदर्श व्यक्तित्त्व की स्थापना करते हैं। इसी प्रकार व्यवहार की कसौटियों एवं समाज की अच्छाईयों से सम्बन्ध रखने वाले नीति वाक्य तथा उपदेश सार जब मानव के आचरण और कर्त्तव्य में परिणित हो जाते हैं, तो वे जीवन मूल्य कहे जाते हैं। सामाजिक मूल्यों की शृंखला में समाहित धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक मूल्य जो मानव को सम्बन्धित परिपेक्ष्य में सदाचरण की शिक्षा देते हैं, जो मनुष्य के समूह को एक दूसरे के सहयोग के लिये प्रेरित करते हैं। मानव मात्र के हित में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देने की प्रेरणा देते हैं, जीवन मूल्य के रूप में प्रतिस्थापित एवं परिभाषित होते हैं। जीवन मूल्य सामाजिक मूल्यों का ही एक अङ्ग है।

मानव द्वारा जीवन मूल्यों की अनदेखी के कारण घृणित असामाजिक कार्यों के कारण देश में अराजकता फैल रही है। मानव शक्ति, धन, ऐश्वर्य प्राप्ति की होड़ में, कर्त्तव्य को भूलता जा रहा है। मान्यता यह है कि जीवन मूल्य विहीन मनुष्य जिसमें विद्या-तप-दान-ज्ञान-सदाचार-वेद निहित कर्त्तव्य-धर्म नहीं हैं तो वे इस लोक में भार स्वरूप माने जाते हैं। यदि मूल्य आधारित जीवन मूल्य नष्ट हो जाते हैं, तो किसी भी मानव, समाज एवं राष्ट्र का विनाश निश्चित है।

जीवन मूल्य के आधार

मूल्यपरक जीवन मूल्यों को सुसंस्कारित करने वाले प्रमुखत: चार आधार माने गये हैं- 1. माता-पिता, 2. शिक्षक. 3. शिक्षण व्यवस्था 4. सामाजिक परिवेश। इनसे मानव में जीवन मूल्य प्रतिस्थापित होते हैं। इनके प्रभाव से व्यक्ति के जीवन में व्यक्तिगत, सामाजिक, देश प्रेम सम्बन्धी, आध्यात्मिक गुणों का विकास होता है।

भौतिकयुग में बदलते जीवन मूल्य

नवीन विचारधाराओं के जन्म के परिणामस्वरूप भारतीय जीवन मूल्य भौतिकवादी दृष्टिकोण रूपी नवीन चकाचौंध में धूमिल होने लगे हैं। इस कारण जनमानस में व्यक्तिवाद, उपयोगितावाद, पूंजीवाद, समाजवाद, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, जातिवाद जैसी विचारधारा बढ़ने लगी है। वर्तमान भारत में भ्रष्टाचार, हिंसा, कुत्सित धर्मान्धता, अनैतिक-आचरणों के कारण जीवन मूल्यों का अवमूल्यन होता जा रहा है। देश में अनिश्चितता, आपाधापी का वातावरण जीवन मूल्यों के प्रति अनास्था का परिचायक है। मानव द्वारा जीवन मूल्यों की अनदेखी के कारण घृणित असामाजिक कार्यों के कारण देश में अराजकता फैल रही है। मानव शक्ति, धन, ऐश्वर्य प्राप्ति की होड़ में, कर्त्तव्य को भूलता जा रहा है। मान्यता यह है कि जीवन मूल्य विहीन मनुष्य जिसमें विद्या-तप-दान-ज्ञान-सदाचार-वेद निहित कर्त्तव्य-धर्म नहीं हैं तो वे इस लोक में भार स्वरूप माने जाते हैं। यदि मूल्य आधारित जीवन मूल्य नष्ट हो जाते हैं, तो किसी भी मानव, समाज एवं राष्ट्र का विनाश निश्चित है।

जीवन मूल्यों का रक्षण शिक्षा से संभव

मूल्यों की शिक्षा को लेकर आज भी हम अंधेरे में हैं। वैश्वीकरण की आग में झुलस रही मानवता को भारतीय जीवन मूल्यों की महती आवश्यकता है। विज्ञान भी स्वीकार कर चुका है कि भारतीय जीवन मूल्य ही दीर्घजीवी विकास का एक मात्र आधार है। देश में समय-समय पर जीवन

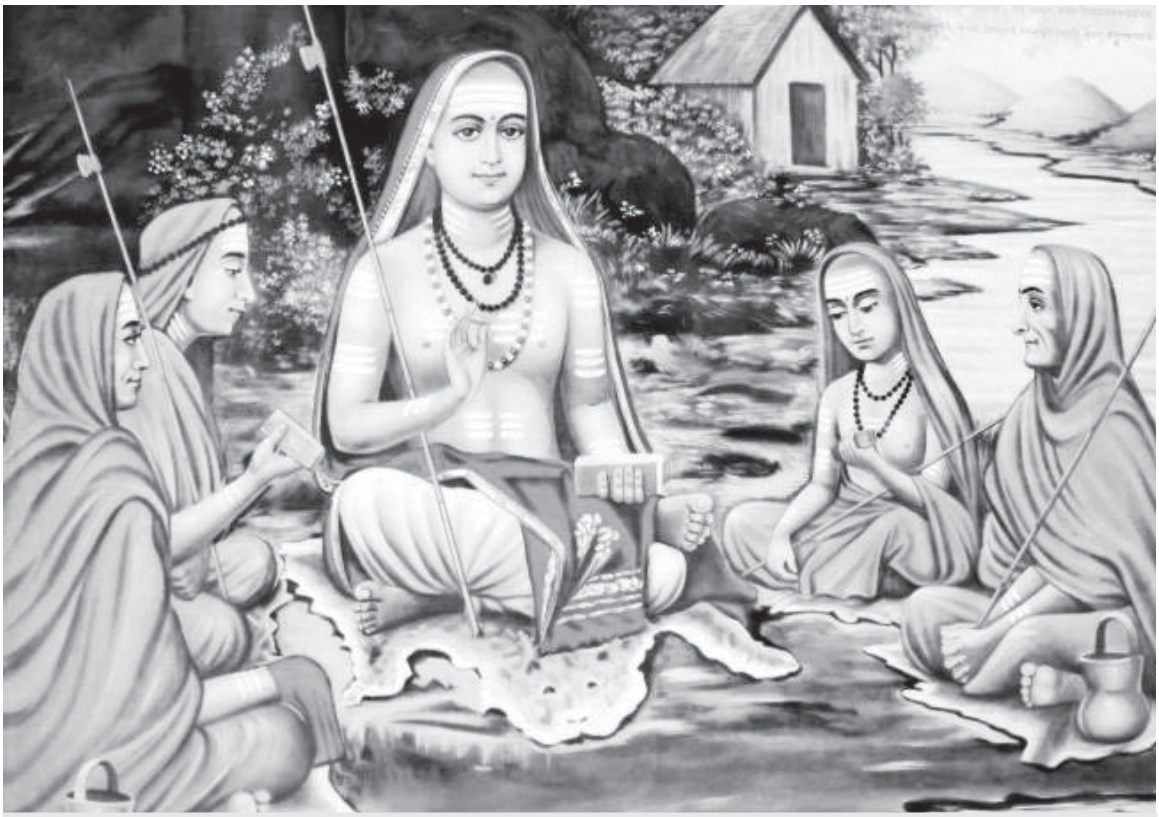

जीवन मूल्यों का सम्बन्ध आचरण तथा संस्कार से माना जाता है। इसका अर्थ यह है कि उचित -अनुचित की भावना, आज्ञापालन, उत्तरदायित्त्व, आत्मविश्वास, सहिष्णुता, दया, सहयोग, आत्मनियंत्रण, सत्य-असत्य का ज्ञान, निष्पक्षता, विश्वसनीयता, अनुशासन जैसे गुण जीवन-मूल्य के कारण हैं। ऐसे गुणों को धारित करने वाले जीवन मूल्य ही जीवन जीने के सूत्र एवं आधारभूत कौशल होते हैं।

मूल्यों की स्थापना हेतु शिक्षा क्षेत्र में आयोगों का गठन और उनकी अभिशंषाओं के आधार पर शिक्षण व्यवस्था, पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या में जीवन मूल्यों का समावेश किया है।

1952-53 में भारत सरकार शिक्षा मंत्रालय की अभिशंषा पर डॉ. डी. प्रकाश की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा से सम्बन्धित समिति गठित की गई। जिसमें मूल्यों की शिक्षा पर विचार किया। आयोग ने शिक्षा द्वारा चरित्र निर्माण तथा अनुशासन पर बल दिया।

- 1964-66 डॉ. दौलत सिंह कोठारी आयोग ने स्कूल पाठ्यचर्या में सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा व्यवस्था हेतु सुझाव दिये।
- 1986 राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने भी मूल्य शिक्षा संरक्षण पर बल दिया।
- 1999 मानव संसाधन विकास मंत्रालय की विभागीय समिति ने एस.बी. चह्वाण की अध्यक्षता में मूल्य आधारित शिक्षा के विविध पहलुओं पर विस्तृत रूप से विचार विमर्श किया। समिति ने पाया कि वर्तमान में विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान में तो बहुत प्रगति हुई है। परन्तु, मूल्यों का पतन हुआ है। चह्वाण समिति ने सुझाव दिया है कि सत्य, धर्माचरण, शान्ति, प्रेम, विश्व बन्धुत्त्व की भावना, अहिंसा जैसे सार्वकालिक मूल्यों का जीवन में निरूपण किया जाना चाहिये।

शिक्षा में राजनैतिक हस्तक्षेप के कारण जीवन मूल्यों के निर्वहन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। पाठ्यक्रम में छेड़छाड़, दलीय नीति, पाश्चात्य प्रभावी विषयों को सम्मिलित करने की प्रवृत्ति से भारतीय संस्कृतिमय जीवन मूल्यों का ह्रास हो रहा है। वर्तमान विकृत पाठ्यक्रम में मानवीय जीवन मूल्यों से युक्त शिक्षा में व्यापक परिवर्तन, सुव्यवस्थित भारतीय संस्कृति युक्त पाठ्यक्रम के सुसंचालन से संस्कृति और जीवन मूल्यों का रक्षण संभव है। ❑

(कोषाध्यक्ष, अ.भा.रा.शै.महासंघ)

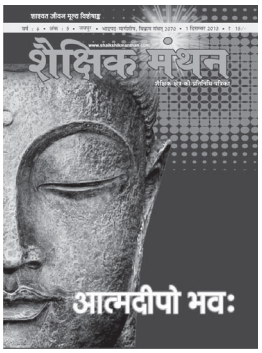

आत्म विश्वास से ही मनुष्य जीवन में सफलता हासिल कर पाता है और सफलता उसके जीवन को सुखद बनाती है। यही नहीं सच बोलने से पवित्रता का भी अनुभव होता है और सच सहज भी लगता है। इसके विपरीत जब हम झूठ का सहारा लेते हैं तो खुद असहज हो जाते हैं। मन में एक भय और आशंका पैदा हो उठती है, जिससे मनुष्य सदा झूठ छिपाने के लिए तरह-तरह के बहाने ढूंढने लगता है। परिणाम, मौलिकता नष्ट हो जाती है क्योंकि आत्मा का मूलभूत मूल्य है सच।

बदलते नैतिक मानदण्ड और शाश्वत जीवन मूल्य

❑ **बजरंगी सिंह**

आज हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं, जहां नैतिक मानदण्ड बहुत तेजी से बदल रहे हैं। ऐसे में जीवन के शाश्वत मूल्यों को सुरक्षित रख पाना कठिन चुनौती बन चुका है। आज यह एक आम धारणा बन चुकी है कि सही और ईमानदारी के राह पर चल कर बड़ी सफलता हासिल नहीं हो सकती है। जो इसके विपरीत चलना चाहता है वह अकेला और उपेक्षित हो जाता है। ऐसे में यदि मनुष्य जीवन और उसके मूल्यों का ईमानदारी से आकलन किया जाए और सुविधावाही मनोवृत्ति तथा उपभोगतावादी मूल्यों की प्रतिबद्धता छोड़कर जीवन मूल्यों के बारे में ही सोचा जाए तो पता चलता है कि जीवन मूल्यों की उपेक्षा से उपजने वाली समस्याओं से पूरा संसार त्रस्त है। हिंसा-तनाव, लूटपाट, आतंकवाद, धोखा और फरेब आदि ऐसी समस्याएं हैं जो दिनों दिन गहराती और उलझती जा रही है। मनुष्य दिग्भ्रमित है। उसे सही गलत में भेद कर पाना मुश्किल हो रहा है। परिणाम यह हो रहा है कि सही रास्ता ही नहीं दिखाई पड़ रहा है। आज भ्रम में जीना लोगों को अच्छा लगता है। सही और गलत के मूल्यांकन के लिए दृष्टि की निर्भयता आवश्यक है। झूठ और फरेब भय पैदा करता है। विवेकहीन कभी हीरे-काँच में भेद नहीं कर पाता। धर्म के साथ अधर्म का मेल अनुचित है। आज मनुष्य पदार्थ की कीमत आंक रहा है। जहां लोभ है, वहां वह अपनी माया फैलाता है। लोभ व्यक्ति को मदहोश बना देता है। वह उचित अनुचित का भेद नहीं कर पाता है। जीवन मूल्यों पर चल कर ही समाज, देश ही नहीं अपितु घर-परिवार के चरित्र का भी निर्माण होता है। मूल्य यानी जीवन पथ को तय करने के लिए हर किसी को अपने जीवन

में एक आदर्श स्थापित करना जरूरी है।

हम सच बोलने को इसलिए जीवन मूल्य मानते हैं कि वह हमें एक अंदरुनी ताकत और आत्मविश्वास देता है। आत्मविश्वास से ही मनुष्य जीवन में सफलता हासिल कर पाता है और सफलता उसके जीवन को सुखद बनाती है। यही नहीं सच बोलने से पवित्रता का भी अनुभव होता है और सच सहज भी लगता है। इसके विपरीत जब हम झूठ का सहारा लेते हैं तो खुद असहज हो जाते हैं। मन में एक भय और आशंका पैदा हो उठती है, जिससे मनुष्य सदा झूठ छिपाने के लिए तरह-तरह के बहाने ढूंढने लगता है। परिणाम, मौलिकता नष्ट हो जाती है क्योंकि आत्मा का मूलभूत मूल्य है सच। उसी तरह वफादार और ईमानदार रहना भी हमें अच्छा लगता है। जब कोई धोखा या चोरी करता है तो उसका मन कचोटता है। उसकी नजरें हमेशा झुकी रहती हैं। उसका आत्मविश्वास खत्म हो जाता है। हम ऐसी संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं, जिसने **'सर्वेजनः सुखिना भवन्ति सर्वेजनाः निरामया'** का सूत्र आदि काल से पिरोया है। हमारे पूर्वजों, ऋषियों, मनीषियों तथा महापुरुषों ने एक ऐसी परम्परा, आदर्श और जीवन मूल्य स्थापित किए हैं, जो आज भी हमें रोशनी दे रहे हैं। जो परम्परा एवं आदर्श समयानुरूप नहीं थे वे छूटते गये और जो स्वीकार्य समझे गये वे कायम रहे। हमारी सभ्यता संस्कृति में लचीलापन है। इसमें समय के अनुसार सुधार होता रहता है। केवल वही आदर्श व मूल्य कायम रह पाते हैं, जिन्हें समाज की स्वीकृति मिलती है। भारतवर्ष ही ऐसा देश है, जहां माता-पिता और गुरु को आज भी सम्मान हासिल है। हमारी संस्कृति और सभ्यता हमें स्त्रियों, दीन-दुखियों की सहायता करना और उनके प्रति सम्मानजनक व्यवहार करना सिखाती आ रही है। किसी को धोखा न देना और झूठ न बोलना हमारे आदर्शों में शामिल है। ये आदर्श, परम्पराएं, मूल्य और मर्यादाएं हमारी संस्कृति का अटूट हिस्सा है।

आज इन बदलती परिस्थितियों एवं बदलते नैतिक मानदण्डों के मध्य हमारे मूल्यों का ह्रास हुआ है। इसे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघ चालक माननीय मोहन भागवत जी ने विजय दशमी को संघ के स्थापना दिवस पर अपने उद्‌बोधन में खुद स्वीकारा है। शायद इसलिए उन्होंने देश के युवाओं का आह्वान करते हुए कहा कि देश की बदलती परिस्थितियों के अनुरूप मनोस्थिति बनाएं और तद्नुकूल आगे चलें। आज कई बार सवाल उठता है कि जो सच के रास्ते पर चलता है वह जल्दी सफल नहीं होता किन्तु यह आधा सच है। वास्तविकता यह है कि जो व्यक्ति अपने जीवन मूल्यों पर अडिग है, वह अभय होकर जीता है। निर्भय होकर अपनी बात कहता है। हर पल सुरक्षा का अनुभव करता है। इसलिए हमें दृढ़ता से अपने जीवन के शाश्वत मूल्यों की रक्षा करनी चाहिए और उसकी शुरुआत स्वयं से ही करनी होगी। स्व-परिवर्तन से ही जग परिवर्तन संभव है। आइए, हम इन जीवन मूल्यों का हिस्सा बनें और एक सुदृढ़, सभ्य ओर स्वस्थ्य समाज की रचना करें तभी हमारे जीवन मूल्य सुरक्षित और संरक्षित रह पायेंगे। हमारी संस्कृति का आदर्श 'वसुधैव कुटुम्बकम्' सदा से रहा है, इसलिए उसी राह पर चलकर ही हम श्रेष्ठ एवं आदर्श जीवन जी सकेंगे।❑

(महामंत्री, अ.भा.मा. शि. महासंघ)

DECORATIVE STONES
Mine Owners Processor & Expecters

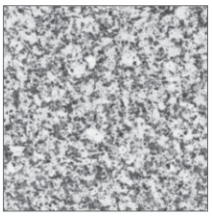
Crystal Yellow

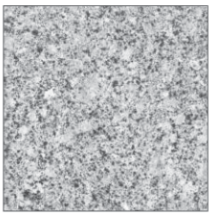
Crystal Brown

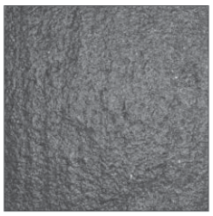
Rhyolite Brown Leather Finish

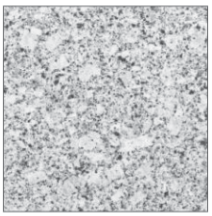
Crystal White

Jade Brown

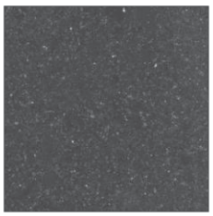
Rhyolite Brown

Decorative Stones
F-86, Riico Ind. Area,
Bishangarh, Jalore (Rajasthan)
Cell - 09414079551, 09462686555

भारत के उर्जा बिन्दू

❑ डॉ. अखिलेश्वर शर्मा

भारत अति प्राचीन काल से विश्व का नैतिक, चारित्रिक एवं आध्यात्मिक गुरु रहा है। हमारा नैतिक स्वरूप आध्यात्मिक स्वरूप में निहित है। वर्तमान कर्म का बीज अवान्तर में अंकुरित होता है यह धारणा हमें अनैतिक कर्मों (शाश्वत मूल्य विहीन) से बचाये रखती है इसी में भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्य निहित है।

शाश्वत मूल्यों से तात्पर्य ऐसे मूल्यों से होता है जो कभी नष्ट नहीं होते हैं अर्थात जब तक प्रकृति है या प्रकृति नष्ट हो जावे तो भी ये शाश्वत मूल्य निरन्तर चलते रहेंगे। ये शाश्वत मूल्य सर्वोच्च शक्ति की देन है इसलिये प्रत्येक मानव उस सर्वोच्च शक्ति के साथ जुड़ा है। भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्य हमें वेदों एवं उपनिषदों से प्राप्त होते हैं। सभी धर्म दर्शनों में शाश्वत मूल्य लगभग एक ही प्रकार की बात करते हैं केवल उन तक पहुँचने की प्रक्रिया में अन्तर पाया जाता है।

जन-जन से परिवार, परिवार-परिवार से समाज, समाज-समाज से राष्ट्र का निर्माण होता है भारत वर्ष का निर्माण इसी संकल्पना पर आधारित है जिसमें वेद प्रदत्त शास्वत मूल्य- 'अनुव्रतः पितुः पुत्रः' पुत्र पिता का अनुव्रती हो (अर्थात निर्धारित कर्तव्य का समुचित रूप से पालन करने वाला हो)। 'माँ भ्राता भ्रातरं विद्विक्षन' = भाई भाई से द्वैष नहीं रखे। 'अतिथि देवो भव' = अतिथि दैव तुल्य होते हैं अतः मेहमानों का आदर सत्कार किया जाना अपेक्षित है। 'संगच्छध्वं संवदध्वम्'= भूमि मेरी माता है, मैं इसका पुत्र हूँ।

उक्त सभी उद्धरण शास्वत मूल्यों की आधारशिला है जो ईश्वर प्रदत्त है जिसे भारतीय संस्कृति का मूल आधार कहेंगे। इसी आधार पर मनुष्य अपना जीवन व्यतीत करता है तो उसे सुख शान्ति, समृद्धि आदि प्राप्त होती है भारतीय संस्कृति के शास्वत मूल्य निम्न बिन्दुओं में भी विस्तृत रूप में समझे जा सकते हैं-

माता-पिता, गुरु एवं गौ वन्दनीय हैं अर्थात पूज्यनीय एवं माननीय हैं इनका सम्मान किया जाना चाहिए।

पर निन्दा नहीं करें- मनुष्य दूसरों का अध्ययन न कर स्वयं के अध्ययन में समय व्यतीत करे।

परोपकार का भाव- मनुष्य (श्रेष्ठ) में दूसरों की भलाई करने का भाव होना चाहिए। जो मनुष्य में साधु भाव को जन्म देकर महान् बनाती है।

सदा सत्य वचन बोलने चाहिए- सत्य में ईश्वर निवास करते हैं अतः इस अमृत तुल्य शब्द पर प्रत्येक मनुष्य को आचरण करना चाहिए।

सदाचारी मनुष्यों की अवमानना नहीं- जो मनुष्य सत्य का आचरण करते हैं उनका अपमान/ कहना नहीं मानना ईश्वर के विरोध तुल्य होगा।

निर्मलता का भाव- मनुष्य में कुटिलता नहीं होनी चाहिए अर्थात् कथनी एवं करनी में अन्तर नहीं होना चाहिए। दूसरे के प्रति दुराग्रह नहीं होना निर्मलता का आधार होता है।

जन-जन से परिवार, परिवार-परिवार से समाज, समाज-समाज से राष्ट्र का निर्माण होता है भारत वर्ष का निर्माण इसी संकल्पना पर आधारित है जिसमें वेद प्रदत्त शाश्वत मूल्य- 'अनुव्रतः पितुः पुत्रः' पुत्र पिता का अनुव्रती हो (अर्थात निर्धारित कर्तव्य का समुचित रूप से पालन करने वाला हो)।

सदगुणों से महानता प्राप्त होती है धन से नहीं अतः मनुष्य को सत्य, धर्म, समर्पण व निर्मलता को जीवन का आधार बनाना चाहिए जिससे महानता प्राप्त होगी।

शुभाशुभ कर्मों का फल भोगना पड़ता है अतः सदैव शुभ कर्मों में ही लगे रहें, जो उक्त बिन्दुओं में भी निहित है।

क्षमा का भाव- वही मनुष्य बड़ा होता है जिसमें क्षमा का भाव विद्यमान हो। 'क्षमा बडन को चाहिए छोटन को उत्पात' इसे चरित्र का एक भाग बनाना चाहिए।

यदि हम धर्म की रक्षा करते हैं तो धर्म हमारी रक्षा करेगा। यह सत्य है आचरण पर यह पंक्ति समझी जा सकती है।

राष्ट्र से प्रेम ईश्वर से प्रेम माना गया है।

धर्म ही ऐसा बन्धु है जो मृत्यु पर मनुष्य के साथ जाता है सभी वस्तुएं यहीं रह जाती है।

उत्तम पदार्थ बांट कर खाने चाहिए।

काम, क्रोध, अहंकार एवं लोभ के परित्याग से उक्त शाश्वत मूल्यों में जीने का आधार निश्चित होगा।

उक्त सभी शाश्वत मूल्य आपस में एक दूसरे से जुड़े हुए हैं जो हमारी भारतीय संस्कृति के मूल हैं। जो हमें इस लोक में महान् बनाकर मोक्ष (जन्म मृत्यु से मुक्ति) प्रदान करते हैं। यही हमारे लिये धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का द्वार खोलता है। हमारी भारतीय संस्कृति सनातन है जो हमें शाश्वत मूल्यों के साथ जोड़ती है इसी कारण सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति महान है जो हमें शिक्षक का दर्जा प्रदान करती है। हमारी भारतीय संस्कृति आस्था का विषय है जिसे आचरण/ प्रयोग से ही समझा जा सकता है विज्ञान भी इसे आचरण से प्रमाणित कर सकता है। ❑

(प्राध्यापक, राज. महाविद्यालय)

विज्ञान और तकनीकी शिक्षण में मूल्य शिक्षा

❑ **दीनानाथ बत्रा**

हम भारतीय योग्यताओं, क्षमताओं तथा ज्ञान-विज्ञान में किसी भी देश से कम नहीं। हम गर्व से कहते हैं कि हम वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी दृष्टि से विश्व के राष्ट्रों में क्रमांक 3 पर हैं। संख्यात्मक दृष्टि से भारत संसार का सबसे बड़ा प्रजातान्त्रिक देश है। यह सब होते हुए भी हमें इस तथ्य को स्वीकार करना होगा कि अभी हमारी गणना महान प्रजातन्त्र के रूप में नहीं हुई है। विज्ञान की प्रयोगशालाओं से विकास की अजस्र प्रवाह धारा हमारे करोड़ों अभावग्रस्त बन्धुओं को स्पर्श नहीं कर सकी है।

सामाजिक कुरीतियाँ, निर्धनता, ऊँच-नीच, भेदभाव, निरक्षरता ने हमारे देश की गति तथा प्रगति को अवरुद्ध किया है। आतंकवाद तथा गरीबी की विभीषिका ने देश की अस्मिता तथा अखण्डता को विचलित कर दिया है।

इन सब समस्याओं का निदान देश की जनता की इस आत्मानुभूति में है कि अब हम स्वतंत्र देश के सशक्त नागरिक हैं। हम उन बुराइयों की चर्चा न करें, अपितु अपने कर्तव्यों का पालन करें।

Let us not curse the darkness
we should light the lamp
whereever we are.

शिक्षा तथा जानकारी

Knowledge is lost in its information
Education is lost in its knowledge
Wisdom is lost in its education

स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में ''शिक्षा जानकारियों का ढ़ेर नहीं, जो मस्तिष्क में रहकर सड़ांध पैदा करती है। उनका कहना है "Education is manifestation of perfection that is already in man"

शिक्षा के उद्देश्य और जीवन के उद्देश्य में कोई अन्तर नहीं है। ''सा विद्या या विमुक्तये'' विद्या वही है जो मोक्ष की ओर ले जाती है और यही मनुष्य का भी अन्तिम लक्ष्य है। आज की समस्याओं का मूल शिक्षा के सही स्वरूप तथा सकारात्मक परिभाषा को सार्थक न करने के कारण है। केवल उपाधि प्राप्त करना ही शिक्षा मान लिया गया है। अतः शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता है। शिक्षा के माध्यम से चरित्रनिर्माण तथा व्यक्तित्व का विकास हो, शिक्षा मूल्यपरक बने, महत्त्वपूर्ण आचार नहीं, आचरण है, महत्त्वपूर्ण चित्र नहीं चरित्र है।

"If there is righteousness in head, there will be beauty in character. If there is beauty in character, there will be harmony at home . If there is harmony at home, there will be order in the society. If there is order in the society, there will be peace in the world.

विश्व में धार्मिक विचार, अनुकरणीय चरित्र, परस्परानुकूलता, सुगठित परिवार, सन्तुलित समाज, अखण्ड राष्ट्र विश्व-शान्ति के यह अभिन्न अंग हैं। प्रत्येक क्षेत्र में शिक्षा को मूल्यपरक होना चाहिए।

आज शिक्षा लक्ष्यविहीन है। परिणामस्वरूप मूल्यों का ह्रास है। गांधी जी ने इस विषम परिस्थिति का अवलोकन करते हुए कहा था कि देश सौ पापों से ग्रस्त है। आज सब व्यवसाय करते हैं, परन्तु यह उनकी वृत्ति नहीं, पैसे के लिये कार्य करते हैं, पूजा के लिये नहीं। राजनीति धर्माधारित नहीं, शिक्षा संस्कारविहीन है। जीवन में तत्व का बोध तथा सत्य का शोध नहीं। हम सब अधिकारों की चर्चा करते हैं, इनके लिये आन्दोलन करते हैं, संघर्ष भी करते हैं, कर्त्तव्यों का पालन नहीं करते। हम यह माँग करते हैं कि देश मुझे और अधिक दे, परन्तु यह भूल जाते हैं कि देश के प्रति भी कुछ कर्त्तव्य हैं। समाज के अभिन्न अंग होते हुए भी सामाजिक समरसता के भाव को पुष्ट नहीं करते। देश को इन पापों से मुक्त कराने के लिये शिक्षा मूल्यपरक होनी चाहिए। मूल्यों की नींव पर खड़ा देश ही अपने उच्चतम आदर्श को स्पर्श कर पायेगा।

मूल्य क्या है?

हमारी प्रवृत्तियाँ, आचार, विचार, व्यवहार तथा सामाजिक स्तर का मूल्यांकन जीवन मूल्यों से ही होता है। मूल्य वह है जो व्यक्ति और समाज के संरक्षण में सहायक हो। ''सत्यं, शिवं, सुन्दरम'' से निसृत हो।

विज्ञान से भौतिकवादी जगत की खोज होती है और इसके आधार पर मनुष्य बहिर्गमन करता है। कामनाओं, इच्छाओं तथा वासनाओं की तृप्ति का प्रयास करता है परन्तु वह कभी सन्तुष्ट नहीं होता। वह जितना दौड़ता है, उतना ही तनावग्रस्त होता है। अन्तर्यात्रा से ही दिव्यता के दर्शन कर वह ऊर्जावान होकर जब बाहर आता है तो उसे आनन्द की अनुभूति होती है। यात्रा और तीर्थयात्रा जीवन की सफलता के यह दो सोपान हैं, यही धर्म है। उपनिषदकारों ने कहा है ''श्रेयस निश्रेयस सिद्धिः स धर्म।''

विज्ञान तथा तकनिक मूल्य आधारित हो।

ज्ञान, भावना, क्रिया, उद्योग, उपयोग, प्रयोग तथा योग इनमें से किसी एक का भी विछोह होने से विज्ञान अभिशाप बन जाता है तथा प्रौद्योगिकी दृष्टि संकुचित हो जाती है। व्यक्तिगत सफलता के लिये मनुष्य, व्यक्तिनिष्ठ जीवन और धन, बल, सम्मान को सर्वस्व मानकर, संवेदनहीन तथा स्वार्थी बन जाता है।

थामस हक्सले ने कहा है ''Advancement of knowledge is for alleviation of human suffering.''

''ज्ञान की प्रगति से मनुष्यों के दुःख दर्द मिटने चाहिए'' अतः शिक्षा के माध्यम से मानवीय उमंग तरंगायमान होनी चाहिए।

''शिक्षा के उद्देश्य तथा जीवन के उद्देश्य में कोई अन्तर नहीं है'' डॉ. सम्पूर्णानन्द। जो दूसरों के लिये जीता है, उसे इन्सान कहते हैं। जो अपने लिये जीता है, उसे हैवान कहते है।

वैज्ञानिक आविष्कार तथा प्रौद्योगिक प्रगति से गरीबी दूर हो, अनपढ़ता का अभिशाप मिटे और सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन हो। भ्रष्टाचार, कर की चोरी, संवेदनहीनता, शोषण समाप्त हो।

स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो से 1894 में पत्र लिखा था ''As long as millions live in hunger, I hold every one as a traitor who has been educated at their expense and pays not the least heed to them'' इस देश में लाखों लोग भूखे हैं। मैं ऐसे सब पढ़े-लिखे लोगों को गद्दार मानता हूँ, जो गरीबों को सुविधाओं से वंचित कर पढ़े लिखे हो गए हैं

और उनकी तरफ थोड़ा सा भी ध्यान नहीं देते।'' उन्होंने बार-बार कहा है ''They alone live who live for others, the rest are more dead than alive'' जो दूसरों के लिये जीते हैं, वह ही जीते हैं, शेष तो लोहार की धौंकनी के समान सांस लेते हैं।

जब तकनीकी प्रगति का भौतिकवाद की ओर झुकाव होने लगता है, ऐसी प्रगति केवल विस्तार है गुणात्मक विकास नहीं। सुख देती है जो क्षणिक है आनन्द नहीं जो शाश्वत है।

हमारे संविधान की प्रस्तावना में अधिकार और कर्त्तव्य दोनों की चर्चा है। संविधान की प्रस्तावना को गम्भीरता से अध्ययन करें और सोचें की हम देश के स्वतन्त्र नागरिक हैं। अधिकारों और कर्त्तव्यों दोनों के प्रति हम सजग रहें। व्यक्ति की स्वतन्त्रता, स्वानुशासन, मानवीय मन तथा सत्यान्वेषी बुद्धि तथा राष्ट्रहित का ध्यान रख, संविधान की मूल भावनाओं का आदर करें।

श्रीमद्भगवद्गीता के अन्तिम अध्याय 18 के अन्तिम श्लोक में कहा गया है:

यत्र योगेश्वर: कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धर:
तत्र श्रीविजयोभूतिर्धुवो नीतिर्मतिर्मम।।

जहाँ योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीवधारी अर्जुन हैं, वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है- ऐसा मेरा मत है।

यहां, विज्ञान, आध्यात्मिकता तथा कर्म संस्कृति का समायोजन है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विजय, सफलता, सुख, सम्पन्नता तथा अविचल नीति के लिये इस संगम की आवश्यकता है।

किसी भी क्षेत्र में ''उच्चतम'' को प्राप्त करने के लिये कर्म योग आवश्यक है। कर्म और पूजा के समान कर्म तथा कर्म ही पूजा।'' कर्म का यह तीसरा प्रकार है, कर्म संस्कृति और यह कर्म योग है।

वेद में कहा गया है कि यदि कर्म तुम्हारे दाएं हाथ में है तो विजय तुम्हारे बाएं हाथ में है।

विकास की अवधारणा केवल भौतिक सुविधाओं तक सीमित नहीं, अपितु प्रत्येक स्तर पर गुणात्मक विकास चाहिए। परिश्रम, साझेदारी, सहभागिता, समझदारी, मानवीय दृष्टिकोण तथा समायोजन यह हैं जीवनमूल्य, जो विकास के आधार हैं। इस मार्ग पर आगे बढने से सुख सम्पन्ता प्राप्त करते हैं। जीवन का दृष्टिकोण है।

- स्व समायोजन, Harmony of man with himself
- मानव -मानव के प्रति समदृष्टि, Harmony of man with man.
- मानव का प्रकृति के प्रति समरसता - Harmony of man with nature

शरीर की सबलता, प्राणों का सन्तुलन, मानसिक सद्विचार, बौद्धिक सत्यान्वेषण, सेवाभाव, सब प्राणियों में एकात्मक भाव के दर्शन, प्रकृति का पोषण, इन सब गुणों में एकात्म भाव के दर्शन तथा प्रकृति का पोषण ये सब को सुखी तथा निरामय बनाने के लिये हैं। प्रगति के पदचाप की यह मधुर ध्वनि है जो संताप मिटाती है, सुख और शान्ति लाती है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने निम्न दृष्टिकोण की निन्दा की है। यन्त्रवत कार्य, जीने के लिये खाना तथा पीना, कमाना तथा वेतनभोगी बनना, लाभ तथा पदोन्नति के लिये कार्य करना, अन्नमयकोश के आवरण को हटाना मात्र है। आनन्दमय कोश तक पहुँचने के लिये प्राणमय, मनोमय तथा विज्ञानमय कोशों के आवरणों को हटाने के लिये आध्यात्मिक पथ के पथिक बनना होगा। भोग से नहीं, योग से समस्याओं का निदान होगा।

दरिद्र नारायण की सेवा ही ईश्वर की आराधना है।

लक्ष्य की प्राप्ति के लिये भौतिक, मानवीय तथा आर्थिक संसाधनों का समायोजन ही प्रबन्धन है। आज प्रबन्धन में मानवीय चेहरा पहनने की आवश्यकता है।

यदि किसी उद्योग के प्रबन्धक को जादू की छड़ी (Magic bar) दे दी जाये और उससे कुछ मांगने को कहा जाये, तो सफल प्रबन्धक सबसे मिलकर काम (Team work) करने की सीख मांगेगा। प्रबन्धक को यह ध्यान रखना है कि वह सभी कार्यकर्त्ताओं में से एक है, वह उनसे केवल एक कदम आगे है। मिलजुल कर काम करने से सुख-दु:ख सहभागिता, नि:स्वार्थता तथा ''मैं नही, तू ही'' के भाव तथा गुण पुष्ट होते हैं।

आदेश से नहीं, उपदेश से भी नहीं अपितु मन के सन्देश से कार्य होता है। ''Leader is he who leads and is led'' मुखिया वह है जो सब को साथ लेकर चले, उनको कहे और उनकी बात सुने भी''

एक हृदय, दूसरे हृदय का प्रकरान्तर है।''One for all and all for one'' मैं सब के लिये और हम सब एक के लिये- यह हमारी गति की गुनगुनाहट है।

स्वामी रंगानाथानन्द जी ने व्यवस्थापक के दृष्टिकोण के बारे में कहा है ''A manager when he sits in the chair of a manager and he deals with the files with a managers eye, he becomes mechanical but when he wears a human face, he glorifies himself, the work and the worker'' मानवीय चेहरा, उदात्त भावनाएं तथा एकात्मक दृष्टि ही व्यवस्थापक की सफलता के तत्व हैं। Bertrand Russell लिखते हैं ''Values are not mechanical, man has become the modern form of machine''

भारतीय ऋषियों का कहना है - मानव कार्य तथा कार्यकर्ता के लिये जीवन मूल्यों का स्रोत दर्शन शास्त्र ही है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष हमारे चार पुरुषार्थ हैं। शुद्ध साधनों से धन कमाना, काम तथा इच्छाओं का निरोध करना, शक्तिशाली तथा कमजोर व्यक्ति के मध्य में असमानता रहना अधार्मिक है।

हमारी संस्कृति का मूल मंत्र है ''तेन त्यक्तेन भुंजीथा:'' त्याग से भोग करें। वेद में कहा गया है कि 100 हाथों से धन कमाएं तथा 1000 हाथों से दान दें। हमारा धन पर पूर्ण स्वामित्व नहीं है। We are the trustee of the wealth समाज से कमाये धन को समाज के लिये प्रयोग में लाना उचित कहा गया है।

सरस्वती तथा लक्ष्मी का कोई विरोध नहीं है। सरस्वती - ज्ञान से तत्व का बोध तथा सत्य की शोध कराने वाली विद्या की अधिष्ठात्री देवी हैं। लक्ष्मी- अर्थ की स्वामिनी देवी हैं। लक्ष्मी केवल धन कमाने का मार्ग प्रशस्त नहीं करती, अपितु देश की प्रगति, उत्पादन तथा राष्ट्रहित का संरक्षण भी प्रदान करती है।

सरस्वती शुद्ध विज्ञान है (Pure

Science) और लक्ष्मी प्रायोगिक विज्ञान (Applied Science) है। समाज हित के कार्यों में दोनों का समायोजन आवश्यक है।

हमें श्रीमद्भगवद्गीता से प्रबन्धन का सम्पूर्ण दर्शन सीखना चाहिए। इस दृष्टि से हम जापान से भी बहुत कुछ सीख सकते है।

- Mastrhustruta (मातसुशिरा) कम्पनी के सभी कार्यकर्ता, जिन की संख्या एक लाख के करीब हैं, प्रातः 8:00 बजे गीत गाते हैं और प्रार्थना करते हैं।
- वह एक परिवार बन कर रहते हैं। पारिवारिकता, परस्परानुकूलता तथा आत्मीयता- यह उनके प्राण हैं।
- वह कर्मचारियों में आन्तरिक चेतना को जाग्रत करने का प्रयास करते हैं।
- वह कुशलताओं और जीवन मूल्यों की शिक्षाओं का शिक्षण देते हैं।
- सभी कार्यों तथा आचरण में समाज कल्याण सर्वोपरि है।
- ''राष्ट्र की उन्नति तथा विश्व कल्याण'' उनके मार्गदर्शक वाक्य हैं।
- उनका इन तीन तत्वों में विश्वास है - सामूहिक प्रयास (Combined effort) सृजनात्मक सहयोग (Synergic Cooperation), निरन्तर उन्नति की ओर- इस को वहां प्रमद कहते हैं अर्थात् चरैवेति, चरैवेति।
- जापान 7 आध्यात्मिक मूल्यों के प्रचार, प्रसार तथा आचरण पर बल देता है।
- उद्योग के माध्यम से राष्ट्र की सेवा। (National Service through industry)
- न्याय (Fairness)
- समरसता-सहयोग (Harmony and cooperation)
- सुधार के लिये संघर्ष (Struggle for betterment)
- शिष्टाचार और नम्रता (Courtesy and humility)
- समायोजन, आत्मसाक्षात्करण (Adjustment and Assimilation)
- कृतज्ञता (Gradtitude)

इन सब मूल्यों के लिये सब अधिकारी, कार्यकर्ता दैनिक प्रतिज्ञा लेते है।

''मैं नहीं, तू ही'' से जीवन तथा कार्यस्थल की यात्रा आरम्भ होती है और समाप्त भी होती है। अहम-त्वम्-वयम् - सब का कार्य, सब के द्वारा तथा सब के लिये सम्पन्न होना चाहिए।

हमें व्यक्ति नहीं व्यक्तित्व का विकास करना है। स्वामी रंगनाथानन्द जी का कथन है ''I am a person when I have ability, agility and potentiality. As and when I transfer all these qualities to the society, I become personality."

लक्ष्य की प्राप्ति के लिये समर्पण भाव चाहिए। शरीर को नहीं, मन को संवारिये।

आत्मबोध, आत्मसम्मान, प्रतिबद्धता, स्वानुशासन, अन्तः मानवीय आन्तरिक सम्बन्ध, नागरिक व्यवहार, समय पालन, आध्यात्मिकता, आत्मवलोकन, सामाजिक चेतना, ये सब एक अच्छे कार्यकर्ता के गुण हैं।

मैं जो भी करूँगा, वह उत्तमोत्तम होगा। मनुष्य में जो पूर्णता पहले से ही विद्यमान है- उसका प्रत्येक कार्य में प्रगटीकरण होगा। प्रत्येक छोटे से छोटा कार्य भी पूर्ण होगा।

In short measures, life may perfect be. ❑

(शिक्षाविद्, अध्यक्ष शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास)

With Best Compliments

AXIOM

Powering your ideas

Axiom Energy Conversion Pvt. Ltd., (EV-Division)

Plot No. : 195/1, 2nd Floor, Phase-II, IDA, Cherlapally,
Hyderabad-51, AP, INDIA, Phone : + 91-040-27260555
E-mail : rehababu@axiomenergy.co.in www. axiomevproducts.com

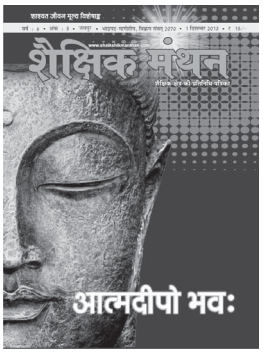

Thus the eternal values of Bharat are distinct, and are products from Vedic and Upanishadic knowledge system. They are effectively transmitted to common people through the medium of Sanatana Dharma, and people had been practicing them through ages. Dharma shall be binding to us, and this makes people of Bharat in the right direction.

Our Concern towards Eternal Values

❑ **T. S. Girishkumar**

Questions concerning values are very much discussed by most societies, in varying manner, and in philosophy we come across both European as well as Bharatiya tradition of Moral Philosophy, in which such concerns are a routine. At the very outset, let me draw a serious and fundamental distinction between Bharatiya way of looking at things and the European philosophising. It is a matter of common knowledge that Philosophy in Bharat is a collective affair, where there are schools of thoughts, and in Europe, it is individuals and individual philosophical systems. The same thing also get reflected when it comes to moral philosophy as well, in Europe we see individual philosophers struggling to provide moral norms, while in Bharat, we mostly deal with moral norms provided of the old.

European moral philosophers struggle to create a moral norm, and then to create a value out of it, for bettering societies. To a large extent, they depended on religion, but with the cessation of the dark ages, this trend got replaced with individual philosophers creating moral principles and moral norms. Trying to very brief, let me sight the example of Immanuel Kant and his moral philosophy, were we see Kant struggling to find a moral principle that he can make applicable to all humans, so he tries to universalise the principle thus created. That is how for Kant the phenomenon of universalisability becomes a test mark to moral principles, that could be made into a moral norm. (finally when Kant comes out with his moral dictum, duty for the sake of duty, that he makes into 'categorical imperative', it comes much close to the 'nishkama karma' of Shrimad Bhagavadgita and many people had worked on comparing the two subsequently)

On the other hand, in Bharat, things had been different. There were no needs for anyone to go about creating any moral principle, or moral norm, as such things were provided to our society of the old. Moral principles were always a part of Bharatiya tradition, and Bharat was always a knowledge society, a continuation of the knowledge system beginning from the great Vedic and Upanishadic tradition. Vedas and Upanishads are not religious texts as commonly thought to be, they are knowledge texts, knowledge of all kinds in compressed form. When knowledge becomes compressed in few words, we have the tradition of calling them 'mantras' also. It is here that one needs a 'Guru' or 'Acharya' to understand such texts, through decoding them in most demystifying manner. The 'Sanatana Dharma' always embodied all these principles in very common language, for all to know and live through. For philosophers and such seekers of knowledge, the texts were always available in many varied forms. Thus, the knowledge was made available on both levels, for the intellectuals, the Vedic and Upanishadic as well as other traditional texts, and for the common people, Sanatana Dharma.

It is often a difficulty for us to be very conscious of using concepts and categories when it comes to philosophy. The presence of European philosophy and European concepts are so overwhelming, that we have to be very conscious and discreet in using concepts. The names of concepts used in European philosophy and Bharatiya Darsana are same or similar, but they are so drastically different from one another in meaning and application. Thus the problem arises, when we use a term to stand for a concept in Bharatiya tradition, it shall mean one thing, but when a European reads it, it may mean something entirely different. There is no escape from this at the moment, we really have to go on living with it. The solution to this lies in creating an autonomous Bharatiya conceptual system, and it is nowhere in sight as on today.

Moral philosophy, questions of values and virtues etc. also suffer from this very

predicament. There is hardly any discussion in Europe about the intricate relations between what is a value and what is a virtue. They appear so confusing, and disconnected from one another. Or is it the case that it is taken so granted that everyone understand the distinction so commonly that there is no need to discuss them? In European tradition, values are made out of the moral principles created. Moral principles created are to become moral norms, (how they become moral norms from arbitrarily created principles is not clear) and these moral norms are to become values in society. (here too, the process is not clear). When individuals practice values in life, they become virtues, when society practices values, it also becomes virtuous. So, one can say that value practiced becomes a virtue.

Now, to discuss on 'eternal values'. By 'eternal values' it is meant that values that are to last for all time. In the European context, this at once creates a contradiction, a question can be asked, can individuals create such values of their own? Do they have sufficient knowledge system to provide some infrastructure? I really do not know if there were such discussions in European philosophes, and if there were, how they had been going about them.

For Bharat, things always remained different. The knowledge system created by the Vedic and Upanishadic tradition provided us with a more than sufficient basis to continue search for knowledge, though mostly they all are already been implicitly or explicitly discussed in the Vedas and Upanishads. They also did discuss about eternal values in detail, which got precipitated through Sanatana Dharma. Here, Sanatana Dharma becomes a carrier of eternal values that easily reaches common mass, and we can still see common people in our nation going on practicing them on a routine.

Let me show one or two examples to this. The Rig-Veda teaches us to see divinity in everything. In a tree, in animals and in everything. This provides an attitude, of respect to all living as well as non-living things in the cosmos, and people still live by that. On the contrary, Christianity taught Europe that God created everything for man to utilise. So they went on a rampage of nature, and today they are lamenting on conservation, ecology etc. and so on. Whereas in Bharat there was always this 'Santimantra' that used to offer Santi to all aspects of nature, let us recall the Santimantra of "Dao Santi, Aushadheya Santi, Apa Santi……".

The very epistemology of co-existence is yet another eternal value in practice in Bharat. The epistemology of co-existence rules out differences among specificities and enables apparently different phenomena to co-exist. (the very existence of Bharat as one unit though there are many variations, the very existence of Sanatana Dharma as one complete whole though there are varying practices, faith systems, rituals etc. are two great examples here). The epistemology teaches us that there is always a unity among plurality and multiplicity. On the other hand, the epistemology teaches us that there is no real difference at all. The Brihadaranyakopanishad says the following mantra: 'manassaivanu drushtavyam, nehananastikincana, mrutyohosamrityumapnopi, ya ihananevapasyati'. (Brihadaranya kopanishad 4:4:19) Nehananasti kincana, is said, to mean that there is no difference at all.

Undoubtedly, the first ever written text of mankind is the Rig-Veda. See what Rig-Vada says 'Ekam Sat, VipraBahudhaVadanti' (Sukta- 164, mantra- 46). The Rig-Veda also says that 'AnoBhadra: Kritavo Yantu Viswata' (Mandala-1, 81:1). Now, let me try to discuss about the eternal values resulted from these teachings of Rig-Veda. The first mantra says that there is only one truth, though scholars speak about the same in different manner, as knowledge is available to them. This forms the very basis of world view and perspective of an individual of Bharat. This formed the religious out look of Sanatana Dharma, an out look that understands the importance of other faiths. Today people speak about secularism at length, but they fail to understand that the concept of secularism is entirely meaningless in Bharat. Our Dharma teaches us to respect other religions, and we had been doing this for ages. Secularism or tolerance are alien concepts to us, and what is more, what one tolerates shall be often something of a non-sense. This attitude is further strengthened by the mantra, of welcoming noble thoughts, no matter from where and by whom.

Thus the eternal values of Bharat are distinct, and are products from Vedic and Upanishadic knowledge system. They are effectively transmitted to common people through the medium of Sanatana Dharma, and people had been practicing them through ages. Dharma shall be binding to us, and this makes people of Bharat in the right direction.

To conclude, let me also say this: this knowledge system is exclusive to Bharat. No where in the world there is any knowledge system that can come near this. And here, it also becomes our responsibility not only to maintain this knowledge system, not only to propagate it, but also to protect it, and preserve it from being lost or getting destroyed through influences from without. Dharma shall protect the protector of Dharma, and all of us will have do whatever small things to protect this, 'DharmoRakshatiRakshita'❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Vadodara, Gujarat)

विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग

'जीवनं सत्यं शोधनम्' को आदर्श बनाकर अपने अल्प काल में उच्च शिक्षा एवं संस्कृति के क्षेत्र में नित नई ऊँचाइयों की ओर विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग के निरन्तर बढ़ते कदम।

- विनोबा भावे विश्वविद्यालय ने वर्ष 2011 से 2013 को 'क्षमता निर्माण वर्ष' घोषित कर रखा है। इस दिशा में कई कदम उठाये जा रहे हैं।
- विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विभागों में कम से कम एक स्मार्ट क्लास रूम का निर्माण किया जा चुका है।
- अपनी स्थापना के 20 वर्ष के कार्यकाल में उत्तरी छोटानागपुर के युवाओं के लिए विश्वविद्यालय परिसर में अभियंत्रण महाविद्यालय, एम.बी.ए., एम.एड. एवं विधि महाविद्यालय संचालित है।
- एस.सी./ एस.टी. कोषांग एवं एस.सी./ एस.टी. स्टेंडिंग कमेटी को विश्वविद्यालय स्तर पर गठित किया गया है।
- विश्वविद्यालय को पूर्णत: कम्प्यूटरीकृत किये जाने की प्रक्रिया जारी है एवं यह झारखण्ड का प्रथम विश्वविद्यालय जो 'वाइड एरिया नेटवर्किंग' से जुड़ गया है।
- खेल-कूद के विकास के लिए विश्वविद्यालय में खेल-मैदान का निर्माण किया गया है एवं खेल-सामग्री क्रय की जा चुकी है।

(डॉ. एस. पी. सिन्हा)
कुलसचिव

(सुरेन्द्र सिंह, IAS)
कुलपति

होटल नटराज

मनपंसद भोजन एंव अल्पाहार

तारा राम माली

जिला उपाध्यक्ष
भारतीय जनता पार्टी, सिरोही

सिरोही मो.9414151671

शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

दिनेश प्रजापत

ग्राम सेवक एवं पदेन सचिव लोटाणा

पंचायत समिति पिण्डवाड़ा, जिला सिरोही राजस्थान

With Best Compliments from all our Family

Vijay Laxmi
Sarees

Babulal Chhogaji Purohit
Abhishek Babulal Purohit
Manisha Babulal Purohit
Priyanka Babulal Purohit

शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

रतनलाल गरासिया

सरपंच ग्राम पंचायत लोटाणा

पंचायत समिति पिण्डवाड़ा,
जिला सिरोही राजस्थान
9928593619

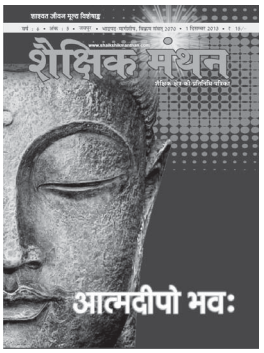

Young India must understand that Swami Vivekananda was not being emotional or sentimental in their defence of India. His intellect pierced through the superficialities of external appearances and he had the discrimination to see differentiate between the ephemeral and eternal. Let us learn from the story of the rise and downfall of many great civilizations and respect the fact that if India has not yet succumbed to a similar fate, then there must be some strength in our culture which has withstood the agni pariksha of Time, the all-destroyer.

What Indian Youth Need to Know About Indian Culture

❑ **M. Pramod Kumar**

Before I answer the question of what Indian youth need to know about Indian culture, perhaps it is more pertinent to ask 'what do Indian youth know about Indian culture today?' The typical response to this question would be 'very little' or 'nothing.'

An undergraduate student at a school where I offer course on Indian Culture, shared this new finding about Swami Vivekananda: 'Swami Vivekananda spoke in Tamil at the World Parliament of Religions held in South Africa!' (sic)

Perhaps, I might across as a bit cynical, but having taught Indian Culture to undergraduate students for ten years now, I have learnt to be not just optimistic but more realistic in my assessment of where the younger generation stands today vis-a-vis Indian Culture.

The current situation or problem is simply born out of choice. There are many lifestyle choices available to Indian youth today. A hundred years ago, Indians did not have to make cultural and lifestyle choices like we do today.

Added to this problem of choice, is the handicap of ignorance. Today's youth are not making a well- informed choice. It is not that they have examined the pros and cons of the lifestyles they choose or reject, it is simply a herd mentality which we all grow up with. We follow blindly whatever our peers do.

The young Indian is obsessed with the latest trends of globalization, to him what is new is cool and fashionable and all that is old is not even worth trying. Whether it is the latest fashion in clothing, be it a low rise jeans or a trendy jacket, or a major lifestyle choice such as a 'live-in' relationship, the young Indian says newest is the best.

Therefore, it is important that we create a system within the family, in the schools and colleges and in our local societies, which can impart knowledge of the foundations of Indian culture to the youth and engage them in a dialogue to address their doubts, so that they can make a wise choice based on a clear understanding of the stakes involved.

Let us examine some 'frequently asked questions' about Indian culture with the hope that the resolution provided to these FAQs will help the readers to engage the younger generation in a fruitful dialogue.

Is Indian Culture outmoded?

All that is old or ancient is not necessarily outdated and all that is new may not be good, even if it is fashionable. In this simple advice, lies the key to understanding young India's predicament.

The young Indian wears a peculiar brand of tinted glasses on his eyes. When he looks to the West, he sees only milk and honey. 'Look at how disciplined and civic conscious they are, look at their clean cities and orderly queues,' he says. When he looks at India with his tinted glasses, he sees only dirt and squalor here. 'Our politicians and bureaucrats are corrupt, the situation is hopeless. India is doomed unless we change and become like the West.'

If the West is truly so progressive and faultless, why is there such seething discontent and turmoil within? This discontent found expression in the 'Occupy' movement recently which is

It is important that we create a system within the family, in the schools and colleges and in our local societies, which can impart knowledge of the foundations of Indian culture to the youth and engage them in a dialogue to address their doubts, so that they can make a wise choice based on a clear understanding of the stakes involved.

seeking answers to the economic inequality and exploitation created by a world controlled by large corporations which disproportionately benefit a minority. Just a hundred years of this western economic and technological advance has brought much of the earth's natural resources to the brink of an irreversible collapse.

And is there no corruption or social evil then in Europe or USA today? If so, why is that the leading intellectuals of the West are predicting their own eventual implosion owing to social degeneration:

"Taking recent rioting in Greece as my starting point… I argue that Western nations are in terminal decline unless they can rediscover the true meaning and value of marriage and of the blessing of children as a gift to married couples and to society in general."

Let us listen to the sane voice of Swami Vivekananda who diagnosed this disease of the young Indian long ago and warned us against it:

"On one side, new India is saying, "If we only adopt Western ideas, Western language, Western food, Western dress, and Western manners, we shall be as strong and powerful as the Western nations"; on the other, old India is saying, "Fools! By imitation, other's ideas never become one's own; nothing, unless earned, is your own. Does the ass in the lion's skin become the lion?" On one side, new India is saving, "What the Western nations do is surely good, otherwise how did they become so great?" On the other side, old India is saying, "The flash of lightning is intensely bright, but only for a moment; look out, boys, it is dazzling your eyes. Beware! " (CW, IV:477)

This is precisely our condition today and nobody could have put it more poignantly than the patriot monk of India who had great faith in the foundational values of Indian civilization.

Young India must understand that Swami Vivekananda was not being emotional or sentimental in their defence of India. His intellect pierced through the superficialities of external appearances and he had the discrimination to see differentiate between the ephemeral and eternal. Let us learn from the story of the rise and downfall of many great civilizations and respect the fact that if India has not yet succumbed to a similar fate, then there must be some strength in our culture which has withstood the agni pariksha of Time, the all-destroyer.

Can Indian Culture guaran-

tee success in the modern world?

Success for the young Indians today is purely a materialistic term. An individual's success is measured by his bank balance. Only those things are valuable to us which have a good market value. Young India therefore wants a 'culture' which can guarantee materialistic prosperity. Swami Vivekananda would look down upon us and perhaps say, 'Fine! So be it. Have your fill of materialism before you understand success in a more subtle sense."

Yes my dear young friends, India was successful for more than a millennium in the materialistic sense. According to the economic historian Angus Maddison, India had the world's largest economy during the years 1 AD and 1000 AD. And India continued to be a major economic power till the British systematically reduced it to one of the poorest nations on earth.

Left to ourselves, our cultural traits have aided us in creating wealth and prosperity for society. Paul Johnson, a columnist for the Forbes magazines comments on these remarkable cultural traits which continue to contribute to the success of the Indian Diaspora all over the world:

"When left to themselves, Indians always prosper as a community. Take the case of Uganda's Indian population, which was expelled by the horrific dictator Idi Amin and received into the tolerant society of Britain. There are now more millionaires in this group than in any other recent immigrant community in Britain. They are a striking example of how far hard work, strong family bonds and a devotion to education can carry a people who have been stripped of all their worldly assets."

Swami Vivekananda had more faith in human beings than in all the material wealth of the world:

"First of all, try to understand this: Does man make laws, or do laws make man? Does man make money, or does money make man? Does man make name and fame, or name and fame make man? Be a man first, my friend, and you will see how all those things and the rest will follow of themselves after you." (CW, V:491)

Management gurus who are predicting the implosion of Western economies are turning towards the wisdom of the Bhagavad Gita and the Artha Shastra today. Success is an unfoldment of the inner strength of individual. It is such cultured individuals to make a society successful and not the other way round.

What about India's social evils?

Young India wants to clean up all the social ills of Indian society in a jiffy. Generation X and their ancestors in social reform, in their hurry to clean up, have often ended up creating more problems than solving any.

Swamiji was at his humorous best when he sarcastically commented on pseudo-reformers who considered the West as a benchmark in resolving the problems of Indian women. When one such reformer asked him about his views on widow remarriage, Swamiji retorted,

"I am asked again and again, what I think of the widow problem and what I think of the woman question. Let me answer once for all - am I a widow that you ask me that nonsense? Am I a woman that you ask me that question again and again? Who are you to solve women's problems? Are you the Lord God that you should rule over every widow and every woman? Hands off! They will solve their own problems. O tyrants, attempting to think that you can do anything for any one! Hands off! The Divine will look after all. Who are you to assume that you know everything?" (CW, III: 207)

Similarly, during his tour of the US, an American lady made a reference to the British propaganda surrounding the myth of Indian mothers throwing unwanted babies into the Ganga. Swamiji jovially replied, "Yes Madam! My mother also threw me into the Ganga. But I was so fat that no crocodile could swallow me, and here I am lecturing to you, having crossed the Indian Ocean." (CW, IV:161)

Swamiji repeatedly cautioned that India should not accept ideas, reforms or social practices coming from the West without critical examination and validation in the light of the foundational values of Indian civilization. He never advocated throwing the baby out with the bath water.

This does not mean that we are asked to go back to the traditional customs of the past. Customs and rituals are but expressions of the culture of Bharatavarsha. Sometimes, the expression may become distorted over a period of time owing to incursions and deviations. But as long as the soul is untouched, the culture lives on and readapts itself to the changing needs of the people. The Bhagavad Gita

teaches us that when the body becomes old and diseased, it is discarded like a piece of old, worn out cloth and the soul finds a new body. So it is with customs and social practices.

If some of our customs and practices have become outmoded, we have the freedom to do away with them as a gardener would chop off deadwood to prevent the rot from spreading in order to save the tree. But have gained the eligibility to sit in judgement over Indian society or to reform its complex mechanisms? Only a person who loves India deeply can gain the authority to change it.

The Core of Indian Culture

So, what is this soul of India which has survived in spite of many ups and downs that we have witnessed over millennia? The core of Indian Culture is the Vedic vision of life. As long as this spiritual worldview is alive and handed down in tact from generation to generation, India will not only survive but thrive in the ages to come with many new expressions of creativity. Swami Vivekananda never tired of reminding us about the core of Indian Culture in his spirited exhortations:

"…as long as this principal function of our life is not disturbed, nothing can destroy our nation. But mark you, if you give up that spirituality, leaving it aside to go after the materialising civilisation of the West, the result will be that in three generations you will be an extinct race; because the backbone of the nation will be broken, the foundation upon which the national edifice has been built will be undermined, and the result will be annihilation all round."

Will Young India heed the advice of savants like Vivekananda or will it turn away from its heritage and become an imitation of foreign cultures? Swamiji had great faith in the younger generation and hence it does not behove us to be cynical. But, having said that, it is important to reiterate what was said in the beginning of this article - it is imperative and urgent that we create systems to disseminate knowledge of Indian Culture to the youth.

There is perhaps no better way of spreading awareness of Indian Culture than by making Vivekananda literature accessible to the youth. As we participate in the 150th Jayanti celebrations of Swami Vivekananda, let us all take a resolve to create at least one Vivekananda Study Circle in our local societies to herald a silent transformation of the youth of India. ❑

(The author is Assistant Professor and Coordinator of the Department of Cultural Education at Amrita University in Coimbatore, Tamilnadu.)

जीवन मूल्यों का संरक्षण , नैतिक जिम्मेदारी है

अंधियारों के बीच घिरी अब, मानवता उजियारी है ।
जीवन मूल्यों का संरक्षण, नैतिक जिम्मेदारी है ।।
जीवन मूल्यों...

प्यार धर रहा रूप द्वेष का, अपनापन बेमानी है ।
जैसे तैसे काम बने यह, सबने मन में ठानी है ।
झूंठ फरेबी मक्कारी के, कैसे कैसे जाल बुने ।
कारोबार बढ़ाने खातिर, कुछ ऐसे ही लोग चुने ।
इन लोगों की चाल समझना, यह तेरी हुशियारी है ।। 1।।
जीवन मूल्यों...

अपने स्वार्थ में अंधा नर, काम अनैतिक करता है ।
रिश्वतखोरी और मिलावट, जाने क्या क्या करता है ।
नारी की लज्जा के भक्षक, खुलकर विचरण करतें हैं।
नियम कायदों की बंदिश से, ज़रा नहीं ये डरतें हैं।
ऐसे नर पिशाच लोगों को, निपटाओ, बीमारी है ।। 2।।
जीवन मूल्यों...

प्रेम पंथ का इस दुनिया में, फिर से तुम निर्माण करो ।
शोषित पीड़ित दीन दुखी की, जितनी भी हो पीर हरो ।
सदा सहायक बनकर जग में, 'भारत' बढ़ते जाना है ।
दीपक बनकर अंधियारों को, मग से दूर भगाना है।
यह संकल्प सभी को लेना, सबकी भागीदारी है ।। 3।।
जीवन मूल्यों...

– भरत शर्मा 'भारत'

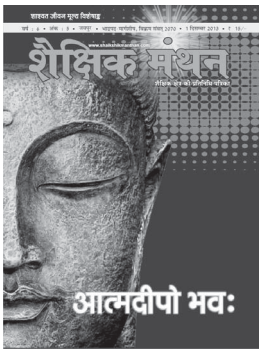

मन की वह स्थिति जो प्रतिक्रिया भेजती है उसे बुद्धि कहते हैं। विषयानुभूति की क्रिया इतने में ही पूर्ण नहीं होती। हम जानते हैं कि किरणों को एकत्रित कर प्रतिबिम्ब बनाने के लिए एक स्थिर पर्दे की आवश्यकता होती है उसी प्रकार इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान को एकत्वभाव प्रदान करने के लिए भी स्थिर वस्तु की आवश्यकता होती है। एक ऐसी वस्तु जो शरीर व मन की तुलना में स्थिर हो। जो भिन्न भिन्न भावों को एक जगह गूंथ सके, उन्हें अखण्डता प्रदान कर सके। मन व बुद्धि द्वारा लाई गई संवेदनाएं जिस वस्तु पर श्रेणीबद्ध स्थापित होती है उसे आत्मा कहते हैं। स्पष्ट है कि मन, आकाश व प्राण में विभक्त होता है। मन के पीछे आत्मा होती है। समष्टी मन के पीछे स्थित समष्टी आत्मा को ही ईश्वर कहते हैं।

जीवनमुक्ति का वैज्ञानिक आधार

❑ **विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी**

अद्वैतवाद ऐसा धर्म है जिसमें मानवता ही नहीं सम्पूर्ण सृष्टि को एक ईकाई माना गया है। न्यूयार्क में बोलते हुए स्वामी विवेकानंद ने कहा कि स्वर्ग-नर्क, जन्म-मरण, देव-दानव आदि सभी बातें मानव द्वारा निर्मित कल्पनाएं हैं। समझाने पर मानव इस बात को स्वीकार कर लेता है मगर मनुष्य अपने अस्तित्व की कल्पना स्वीकार नहीं करता है। हमारी सबसे बड़ी भूल यही है कि हम अपने को शरीर मानकर ही समस्त व्यवहार करते हैं। यदि मनुष्य इस सत्य को स्वीकार ले कि वह ईश्वर है तथा ईश्वर के रूप में वह स्वयं में व्याप्त अव्यक्त आत्मा की ही उपासना करता है, तो इस धरा को स्वर्ग में बदलने में कुछ की मिनट का समय लगेगा।

सृष्टि का आधार: आकाश व प्राण

स्वामी जी ने कहा कि चारों ओर हम जो कुछ अनुभव करते हैं वह आकाश (पदार्थ) है। आकाश सूक्ष्म व सर्वव्यापी है। सृष्टि में जो कुछ भी बना हुआ है वह आकाश से बना है। आकाश अकेला निर्माण नहीं कर सकता। वह शक्ति जो आकाश पर कार्य करके जगत की सृष्टि करती है उसे प्राण कहते हैं। प्राण भी आकाश के साथ सर्वव्यापी है। आकर्षण, विकर्षण व अन्य सभी प्रकार की शक्तियां प्राण के ही विविध रूप हैं। कल्प के प्रारम्भ में अनन्त आकाश रूपी समुद्र में प्राण प्रसुप्त रहता है। आकाश भी गतिहीन निचेष्ट होता है। प्राण के प्रभाव से आकाश, समुद्र में गति उत्पन्न होती है और अनेक ब्रह्माण्ड - अनेक जगत उत्पन्न होते जाते हैं।

हिन्दू मत के अनुसार समस्त प्रकार के पदार्थ आकाश के तथा सभी प्रकार की शक्तियां प्राण की विभिन्न रूप होते हैं। कल्प का अन्त होने पर सभी पदार्थ पिघल कर पहले तरल व बाद में वाष्प में बदल जाते हैं। जो कुछ आकाश से उत्पन्न हुआ था उसी में समा जाता है। सभी शक्तियां प्राण में समा जाती हैं। एक कल्प की समाप्ति के तुरन्त बाद दूसरा कल्प प्रारम्भ नहीं होता। कुछ समय तक प्राण विश्राम या निद्रित अवस्था में रहता है। जब प्राण जागता है तो फिर एक नए कल्प का प्रारम्भ होता है। ऐसा निरन्तर चलता रहता है। इस तरह सम्पूर्ण सृष्टि आकाश व प्राण दो भागों से बनी हैं। आधुनिक विज्ञान भी इस बात को स्वीकारता है।

मन व आत्मा

अब प्रश्न यह है कि आकाश व प्राण किससे बने हैं ? इसका जबाव विज्ञान के पास नहीं है मगर भारतीय मान्यता है कि आकाश व प्राण दोनों मन या महत (समष्टी विचार शक्ति) से बने हैं। विचार या मन की सत्ता, प्राण व आकाश से भी सूक्ष्म है। प्रारम्भ में मन ही था। मन ने ही परिवर्तित होकर प्राण व आकाश को बनाया। प्राण व आकाश से समस्त सृष्टि की उत्पत्ति हुई।

हम सम्पूर्ण बाह्य जगत का ज्ञान इन्द्रियों के माध्यम से करते हैं मगर इसका अर्थ यह नहीं है कि इन्द्रियां देखती, सुनती, सूंघती, चखती या स्पर्श करती हैं। इन्द्रियां तो तन्त्रिकाओं के माध्यम से बाह्य जगत की सूचनाओं को मस्तिष्क तक पहुँचाने मात्र का कार्य करती हैं। इससे ऐसा लगता है कि मस्तिष्क बाह्य जगत की सूचनाओं को ग्रहण करता है मगर यह सही नहीं है। कई बार ऐसा होता है कि इन्द्रियों द्वारा सूचना आगे तक पहुँचाई जाती है मगर मन इन्द्रियों से जुड़ा नहीं होने के कारण कुछ भी ग्रहण नहीं करता। मन कुछ ग्रहण करता है तो भीतर से प्रतिक्रिया होती है। मन अपने द्वारा ग्रहण की गई बात को बुद्धि तक पहुँचाता है। बुद्धि उसे अपने पूर्व संस्कारों के अनुसार सजाती है और प्रतिक्रिया प्रवाह भेजती है। इस प्रतिक्रिया से ही विषयानुभूति होती है।

अत: मन की वह स्थिति जो प्रतिक्रिया भेजती है उसे बुद्धि कहते हैं। विषयानुभूति की क्रिया इतने में ही पूर्ण नहीं होती। हम जानते हैं कि किरणों को एकत्रित कर प्रतिबिम्ब बनाने के लिए एक स्थिर पर्दे की आवश्यकता होती है उसी प्रकार

इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान को एकत्वभाव प्रदान करने के लिए भी स्थिर वस्तु की आवश्यकता होती है। एक ऐसी वस्तु जो शरीर व मन की तुलना में स्थिर हो। जो भिन्न भिन्न भावों को एक जगह गूंथ सके, उन्हें अखण्डता प्रदान कर सके। मन व बुद्धि द्वारा लाई गई संवेदनाएं जिस वस्तु पर श्रेणीबद्ध स्थापित होती है उसे आत्मा कहते हैं। स्पष्ट है कि मन, आकाश व प्राण में विभक्त होता है। मन के पीछे आत्मा होती है। समष्टी मन के पीछे स्थित समष्टी आत्मा को ही ईश्वर कहते हैं।

जिस प्रकार समष्टी मन आकाश व प्राण में विभक्त होता है, उसी प्रकार समष्टी आत्मा भी मन के रूप में परिवर्तित हो गई है। स्थूल देह के पीछे इन्द्रियां, इन्द्रियों के पीछे मन, मन के पीछे बुद्धि और बुद्धि के पीछे आत्मा होती है। क्या आत्मा, शरीर और मन से पृथक है? इस प्रश्न का उत्तर विभिन्न धर्म अलग अलग देते हैं। द्वैतवादी कहते हैं कि आत्मा सगुण है, अर्थात भोग, सुख, दु:ख आदि सभी आत्मा के धर्म हैं। अद्वैतवाद कहता है आत्मा निर्गुण है, आत्मा में भोग, सुख, दु:ख आदि धर्म नहीं है। बौद्ध दर्शन आत्मा के अस्तित्व को ही नहीं मानता। बौद्धों के लिए इन्द्रियग्राही जगत ही सब कुछ है। स्वामी विवेकानंद का अनुमान है कि एक लाख लोगों में एक व्यक्ति भी ऐसा नहीं मिलेगा जो दृश्य जगत के पीछे स्थित स्थिर समुन्द्र का आभास पा सके। इस प्रकार दो प्रकार के मत प्रकट होते हैं। एक मतावलम्बी मन के पीछे स्थिर और अपरिणामी सत्ता को स्वीकारते हैं और दूसरे यह मानते हैं कि इस जगत में स्थिरता और नित्यता जैसा कुछ भी नहीं है।

अद्वैतवाद के अनुसार किसी अपिरवर्तनशील वस्तु से तुलना करके ही किसी परिवर्तन को जाना सकता है। यह जगत पहले अव्यक्त, स्थिर और शान्त था। विरोधी शक्तियों से सन्तुलन स्वरूप था। कोई भी शक्ति क्रियाशील नहीं थी क्योंकि साम्यावस्था भंग होने पर ही शक्ति क्रियाशील होती है। वर्तमान जगत फिर साम्यावस्था प्राप्त करने के लिए दौड़ रहा है। अत: आत्मा, मन व शरीर पृथक दिखाई देते हैं, मगर है नहीं। इसे सर्प, रज्जू भ्रम मानना चाहिए। आत्मा ही सर्वव्यापी वस्तु है जो अनेक रूपों में दिखाई देती है। अद्वैत की भाषा में आत्मा ही ब्रह्म है।

जीवनमुक्ति का अर्थ?

स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि ''द्वैतज्ञान बिल्कुल मिथ्या है। सारा जगत द्वैतज्ञान का ही फल है। जब विवेक का उदय होता है तो मनुष्य देखता है कि वस्तुएं दो नहीं एक ही है। तब मनुष्य को बोध होता है कि वह स्वयं अनन्त ब्रह्मस्वरूप है।'' मनुष्य को अनुभव होता है कि वह स्वयं ही परिवर्तन स्वरूप जगत है। मनुष्य स्वयं अपरिणामी निर्गुण, नित्य आनन्दमय है। यूरोपीय भाषा में कहें तो देश-काल के कारण यह एक अनन्त सत्ता इस विषयमय जगत के रूप में दिखाई देती है, पर वास्तव में यह जगत एक अखण्डस्वरूप है। शक्ति का जो कण कुछ माह पूर्व सूर्य में था, हो सकता है वह आज किसी मनुष्य में हो, कल किसी पशु के भीतर तथा परसों शायद किसी पादप में प्रवेश कर जाये। यह आना जाना तो लगा रहता है मगर यह जगत एक अखण्ड जड़ राशि है। जो भेद दिखाई देता है मात्र रूप व नाम का है।

अद्वैतवाद कहता है कि ना कोई आता है और ना कोई जाता है। अनन्तस्वरूप के लिए यह कैसे सम्भव हो सकता है? हम केवल मनुष्य हैं यह कहना मिथ्या है हम तो जगत के ईश्वर हैं। पापी और दुष्ट मनुष्य को ही बाहर पाप दिखाई देता है। पूर्ण सिद्ध पुरुष सभी को साक्षात भगवान के रूप में देखता है। नेत्रों से अज्ञान का पर्दा हटने पर व्यक्ति, पूर्ण सिद्ध पुरुष बन जाता है। संसार में अनेक पूर्ण सिद्ध पुरुष जीवित हैं। ऐसे पूर्ण सिद्ध पुरुष के लिए स्वर्ग या ब्रह्मलोक कोई महत्व नहीं रखते क्योंकि आत्मा भला कहाँ आएगी और कहाँ जाएगी? जीवन की ऐसी अवस्था को ही जीवनमुक्त कहते हैं। जीवित रहते हुए मुक्ति प्राप्त करना ही वेदान्ती का लक्ष्य होता है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार रामकृष्ण परमहंस ऐसी ही जीवनमुक्त विभूती थे।❑

(विज्ञान एवं बाल विषयक लेखक)

दिल्ली में राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन सम्पन्न

उच्च शिक्षा को स्वामी विवेकानन्द के विचारों के अनुरुप ढालने के लिए

स्वामी विवेकानन्द के आविर्भाव के 150 वें वर्ष में भारत एवं समस्त विश्व में किये जा रहे अनेकानेक समारोहों के सन्दर्भ में 16 एवं 17 नवम्बर 2013 को स्वामी विवेकानन्द सार्धशती समारोह समिति द्वारा 'शिक्षा पर स्वामी विवेकानन्द के विचार- राष्ट्रीय पुनरुत्थान के लिए एक दृष्टि' विषय को लेकर दिल्ली में एक अनोखा राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में 125 विश्वविद्यालयों के कुलाधिपति, कुलपति एवं शिक्षाविदों द्वारा उच्च शिक्षा को स्वामी विवेकानन्द के विचारों के अनुरूप ढालने के लिए एक समसामयिक एवं व्यावहारिक मार्ग तलाश करने का प्रयत्न किया।

कुलपतियों के राष्ट्रीय सम्मेलन के मुख्य अतिथि भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. एम.एम. पल्लम राजू रहे। आपने अपने उद्बोधन में कहा कि भारत के गरीबों एवं निम्न वर्गों के लोगों को शिक्षा की उपेक्षा महान राष्ट्रीय पाप है और सभी को शिक्षा देने से ही देश उन्नत होगा। आपने सभी के द्वारा संस्कृत को सीखने की आवश्यकता पर बल दिया। समारोह के विशिष्ट अतिथि श्री अनिल काकोडकर (पूर्व अध्यक्ष, अणु शक्ति आयोग) ने अपने उद्बोधन में कहा कि हमारी शिक्षा व्यवस्था आज भी हीन भावना से ग्रसित है और इससे उबरने के लिए एक सम्पूर्णता की शिक्षा की आवश्यकता है। आज के समय में स्वामी जी के विचार अत्यन्त प्रासंगिक हैं और उनका व्यवहार में लाया जाना देश के विकास के लिए आवश्यक है। पूर्व महासचिव, लोकसभा डॉ. सुभाष कश्यप ने अतिथियों को स्वागत करते हुए कहा कि दुर्भाग्य से आज मानव एक वस्तु मात्र बन कर रह गया है और नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों पर भौतिक मूल्यों की श्रेष्ठता स्थापित हुई है। हमें इस प्रकार की शिक्षा प्रदान करनी होगी जो एकत्व उत्पन्न करे एवं मानव का निर्माण कर सके। स्वामी विवेकानन्द सार्धशती समारोह समिति के सचिव प्रो. अनिरूद्ध देशपाण्डे ने विषय प्रवेश करते हुए स्पष्ट किया कि इस सम्मेलन का उद्देश्य स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचारों के आलोक में भारत में 'शिक्षा को पुनः अनुप्राणित करने एवं उन्हें व्यवहार में क्रियान्वित करना है। उन्होंने कहा कि इसके लिए शिक्षा को राष्ट्रीय सन्दर्भ में देखे जाने की आवश्यकता है।'

उद्घाटन समारोह के पश्चात् विभिन्न विषयों पर सामूहिक एवं सामानान्तर सत्र सम्पन्न हुए। व्यक्ति निर्माण एवं राष्ट्र पुनरुत्थान के सामूहिक सत्र में देव संस्कृति विश्वविद्यालय हरिद्वार के कुलपति डॉ. प्रणव पण्ड्या ने अपने उद्बोधन में कहा कि जो स्वामी जी की आत्मा को समझ सकता है वही भारत देश की आत्मा को समझ सकेगा। स्वामी जी वैदिक विश्वविद्यालय की स्थापना करना चाहते थे क्योंकि उनका मानना था कि शिक्षा को आध्यात्म से जोड़ना आवश्यक है। पण्ड्या जी ने स्पष्ट किया कि समय बहुत तेजी से बदल रहा है और राष्ट्रीय पुनरुत्थान के लिए स्वामी जी के विचारों को हम सभी को स्वीकार करने की आवश्यकता है। प्रो. वी. तिम्मे गोडा इस सत्र के अध्यक्ष रहे। इसके तीन समानान्तर सत्रों में जीवन उद्देश्य एवं चरित्र निर्माण सत्र में सुश्री निवेदिता भिड़े, विश्वबन्धुत्व सत्र में डॉ. ए. के. सिंह तथा व्यक्तित्व विकास में डॉ. एम. के श्रीधर प्रमुख वक्ता रहे। अनेक कुलपतियों ने इसमें अपनी सहभागिता की।

'स्वामी जी के चिन्तन की शिक्षा में प्रासंगिकता' विषय पर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय कोलकाता के कुलपति स्वामी आत्मप्रियानन्द का मुख्य उद्बोधन रहा। आपने कहा कि ऐसा ज्ञान बेकार है जो जीवन के विभिन्न आयामों को न संभाल सके। प्रो. हरर्षद भाई शाह, कुलपति बाल विश्वविद्यालय गांधीनगर ने इस सत्र की अध्यक्षता की। इसके तीन समानान्तर सत्र रहे।

शिक्षक की भूमिका एवं जिज्ञासा जागरण के प्रमुख वक्ता प्रो. बृजकिशोर कुठियाला, कुलपति माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय भोपाल, 'महिला शिक्षा' की प्रमुख वक्ता श्रीमती लीना मेहेंदले, सदस्य केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण मुम्बई तथा 'वंचितों के लिए शिक्षा' के प्रमुख वक्ता डॉ. जोगा राम नेगी निदेशक उच्चतर एवं तकनीकी शिक्षा अरुणाचल प्रदेश रहे।

'विज्ञान एवं एवं अध्यात्म' पर प्रो. विजय भटकर, अध्यक्ष संचालक मंडल आई.आई.टी. दिल्ली का विशेष उद्बोधन रहा। जिसमें आपने बताया कि विज्ञान विशेषतः कम्प्यूटर किस तरह आध्यात्म से ओत-प्रोत है। आपने कहा कि भारतीय दृष्टि में विज्ञान एवं अध्यात्म एक-दूसरे से अलग नहीं है। स्वामी जी के चिंतन का वर्तमान शिक्षा में समावेश के प्रमुख वक्ता पंजाब तकनीकी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. रजनीश अरोड़ा रहे। आपने कहा कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था केवल नौकर पैदा कर रही है। डॉ. योगेश सिंह, कुलपति एम.एस. विश्वविद्यालय वडोदरा ने इस सत्र की अध्यक्षता की। विषय वस्तु एवं

अनुसंधान पर डॉ. वैंकट रंगन कुलपति अमृता विश्वविद्यालय कोयम्बटूर तथा भारतीय भाषाऐं पर डॉ. कपिल कपूर पूर्व प्रति-उपकुलपति जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली प्रमुख वक्ता रहे। अनेक कुलपतियों एवं शिक्षाविदों ने इन विषयों पर अपने अपने विचार प्रस्तुत किये। 'प्रयोगों के प्रस्तुतीकरण' सत्र के समापति डॉ. विश्वनाथ, कुलाधिपति वी.आई.टी. बेल्लोर रहे। इस सत्र में चुने हुए पाँच प्रयोगों का प्रस्तुतीकरण रहा। कार्य योजना पर खुला सत्र श्री जे. के. बजाज, निदेशक, नीति अध्ययन केन्द्र नई दिल्ली की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। अनेक प्रतिनिधियों ने सम्मेलन के निष्कर्षों को कैसे व्यवहार में क्रियान्वयन किया जा सकता है, इस पर अपने विचार रखे तथा संस्कृत एवं भारतीय दर्शन के अध्ययन को अनिवार्य बनाने पर जोर दिया।

समापन समारोह में भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के खराब स्वास्थ्य के कारण न आने पर उनके संदेश को माखन लाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. ब्रजकिशोर कुठियाला द्वारा पढा गया। डॉ. कलाम जी द्वारा अपने संदेश में इस सम्मेलन को 'शिक्षाविदों की संसद' कहा एवं कुलपतियों को देशनिर्माण एवं नैतिक नेतृत्व प्रदान करने को एक मिशन के रूप में स्वीकार करने का आह्वान किया। समिति के सचिव प्रो. अनिरूद्ध देशपांडे ने माननीय अतिथियों का स्वागत करते हुए सम्मेलन में सम्पन्न हुई गतिविधियों की जानकारी प्रदान की। अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय महामंत्री प्रो. जे. पी. सिंघल ने कुलपतियों के राष्ट्रीय सम्मेलन का सहमति पत्रक सदन के समक्ष रखा। इसमें अपने-अपने विश्वविद्यालयों में स्वामी जी के विचारों के आधार पर सर्टीफिकेट, स्नातक, स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम विकसित करना, विशिष्ट पीठों की स्थापना करना, अल्पकालिक फैलोशिप्स प्रदान करना, भारतीय संस्कृति एवं भाषाओं पर शोध करना आदि सम्मिलित किये गये हैं।

समापन समारोह के मुख्य अतिथि पूर्व न्यायाधीश एवं पूर्व राज्यपाल रामा जोइस ने अपने उद्बोधन में कहा कि सैक्यूलरिज्म का गलत अनुवाद धर्म निरपेक्षता करने से देश में अनेक समस्याएँ पैदा हुई हैं। यह हमारे देश का दुर्भाग्य ही है जिसमें राजनेता वोट बैंक के स्वार्थ में डूबे हुये हैं और उन्होंने 'संवैधानिक श्रेष्ठता के स्थान पर राजनैतिक श्रेष्ठता को प्रतिपादित करने का कार्य किया है। न्यायमूर्ति रामा जोईस ने कहा कि सभी भिन्नताओं के उपरान्त भी हमारी श्रेष्ठ संस्कृति के कारण भारत एक राष्ट्र है। डॉ. सुभाष कश्यप ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि स्वामी जी दुर्गा उपासक थे। इसलिए उन्होंने हमेशा राष्ट्र के लिए शक्ति एवं सामर्थ्य प्रदान करने का कार्य किया।

हिमाचल प्रदेश शिक्षक संघ कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग सम्पन्न

हिमाचल प्रदेश शिक्षक संघ के दो दिवसीय राज्यस्तरीय कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल हमीरपुर में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय महामन्त्री प्रो. जे.पी. सिंघल ने दीप प्रज्ज्वलित कर उद्घाटन किया। तत्पश्चात् प्रांत महासचिव श्री रजनीश चौधरी जी ने राष्ट्रीय महामन्त्री व उपस्थित कर्मठ कार्यकर्ताओं का स्वागत किया व कार्यक्रम की रूपरेखा की जानकारी दी। उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि ने अपने सम्बोधन में हि.प्र. शिक्षक महासंघ के कार्यकर्ताओं से आह्वान किया कि वे अपना दायित्व सम्भालते हुए राष्ट्रहित, शिक्षा हित व समाज हित से जुड़े हुए कार्यक्रमों को बढ़ाने की दिशा में प्रयत्न शील रहें। उद्घाटन सत्र के उपरांत कार्यकर्त्ता अभ्यास वर्ग के अन्य सत्र में प्रांतीय अध्यक्ष पवन मिश्रा ने हिमाचल में संगठन की दिशा व दशा पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि हिमाचल प्रदेश में हि.प्र. शिक्षक महासंघ ही एकमात्र ऐसा संगठन है जिसका ध्येय वाक्य 'छात्र हित, शिक्षक हित, समाज हित और राष्ट्र हित' है। यह संगठन ही ऐसा संगठन है जो सामाजिक सरोकार से जुड़े कार्यक्रमों, कर्तव्यबोध दिवस, नववर्ष शुभेच्छा कार्यक्रम, गुरुवन्दन जैसे कार्यक्रमों का आयोजन करता है। प्रथम दिन के द्वितीय सत्र में राष्ट्रीय महामंत्री ने सम्बोधित करते हुए कहा कि कार्यकर्ता ही किसी संगठन की नींव होते हैं तथा कार्यकर्ताओं से संगठन की शक्ति बढ़ाने के लिए सम्पर्क अभियान के तहत वार्षिक सदस्यता की तरफ ध्यान देने की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि किसी भी संगठन की बुनियाद उसके सदस्य एवं कार्यकर्ता ही होते हैं।

अभ्यास वर्ग के दूसरे दिन के प्रथम सत्र को सम्बोधित करते हुए प्रदेश के संगठन मंत्री जगवीर चन्देल ने कार्यकर्ता के व्यवहार, आचरण, ध्येयवाद, सहनशील, कर्तव्यनिष्ठ, इच्छाशक्ति, ईमानदारी व अनुशासन के बारे में जानकारी दी। उन्होंने बताया कि कार्यकर्ताओं को अपने निजी जीवन को व्यवस्थित करते हुए अपने संगठन को सुदृढ़ करने के लिए आवश्यक होना पड़ेगा। द्वितीय सत्र को सम्बोधित करते हुए ठाकुर कामदेव चन्द इतिहास शोध संस्थान के प्रबन्धक श्री चेतराम ने कहा कि संगठन शक्ति को राष्ट्र हित व समाज हित में जोड़ने की आवश्यकता है। समापन सत्र में प्रदेश अध्यक्ष पवन मिश्रा ने राष्ट्रीय महामन्त्री व अन्य कर्मठ कार्यकर्ताओं का धन्यवाद किया। इसमें प्रांत महामंत्री रजनीश चौधरी, सह संगठन मंत्री अशोक कुमार, उपाध्यक्ष चन्द्रदेव ठाकुर, रविदत्त, जगवीर जाम्बाल, प्रदेश कार्यालय सचिव विनोद सूद आदि कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

गतिविधि

APUS has Organised State Level Dharna

The president of Andhra Pradesh Upadyaya Sangham (APUS) T. Sai Reddy got enraged that the promise made to teachers to provide complete Health Care is not implemented by the Govt till date. He added that Health cards are not issued and the Govt is acting with a callous attitude. He demanded the Govt to modify Go No.174,175,176 and issue health cards with cashless treatment facility and extend the benefit to Aided and Muncipal teaches also. He warned that teachers may resort to agitation immediately if the Govt fails to resolve all the issues faced by teachers and the education sector . The indifference of Govt made the teachers protest on Roads leaving their noble duty of making future citizens.

APUS has organized a state level dharna from 11.00 am to 4.00pm at Indira park, HYD on 08-11-2013 in order to resolve the issues. The Govt is treating education sector as No Profit Wing. Rulers are showing step mother affection on Govt schools. The very existence of these schools is endangered . There is no correlation between policies which are adopted and policies which are yet to come. Single teacher is existing in about 10000schools. The student teacher ratio in such schools is shocking. WhileIn some schools , the ratio is 10 times higher and ratio is very least in some cases. The Govt's decision to wind up such schools is a big blow to poor students. The Govt. itself opened the doors for private and corporate culture in education sector. Poor children are deprived of their right to education due to this decision.

State Honourable President U. A. Narasihmam has demanded the govt to merge aided schools with govts schools if it fails to run them. Vacancies are unfilled in aided schools for years. He demanded the govt to issue health cards to aided and municipal teachers and provide leave encashment facility to municipal teachers.

The Associate President of APUS Polaiah demanded the Govt to sanction notional increments to teachers who are working with Rs. 398 salary as special teachers considering their total service period into account. He Thanked all reputed persons ,political leaders and student unions for joining them in organizing a dharna. He stated that APUS is working at central level as a subsidiary to ABRSM.

The National President of ABVP, Sri M Manohar expressed that the teaching learning process should include National Spirit in its curriculum in order to give best results. Many schools are in miserable conditions without basic amenities. He quoted that The honorable President of India ,Sri Pranab Mukarjee who stated that youth who are in majority should be guided to choose right path which is possible only with proper reforms in education sector. Towards this direction, he said ABVP and APUS are going hand in hand to achieve this common goal.

The ex-central Minister of BJP,Sri. B Dathatreya expressed that Govt. is indulging in violation of human rights . It is an insult to note that teacher are made to resort to Dharna on roads. He demanded that Govt should Immediately invite APUS for discussions and provide suitable solutions. He said he would write 75th open letter to CM to play his role in this.

The State President of BJP Sri G. Kishan Reddy questioned Whether the Govt. is committed to protect Govt. Schools and Education Sector or Surrender them to Corporate institutes. He added that The Govt is paying a deaf ear to the problems of govt teachers and public. Teachers on roads is the evidence of Govt's maladministration. He worried that the Govt is exploiting teachers with Rs.398 salary. The condition of aided schools is degrading day by day and there is no strict supervision in education sector. The total MEOs working are less than 1000 and Dy.EOs are less than 95 leaving many vacancies and it seems that there is no Govt existing. Govt utterly failed to implement unified service rules to Teachers. Drinking water and Toilet facility in schools should be maintained in govt schools through single window system which will improve provision of basic amenities. He Promised that he would influence theGovt to announce 49% of IR and upgrade the Pandit and PET posts.

The Ex-Minister of state and BJP Leader Sri Nagam Janardhan Reddy felt that a leave of 15days is to be granted in case of family member's death. He suggested to include in the syllabus biographies of the persons who sacrificed their lives for country . He asked teachers to reduce the dropouts. He hoped that BJP will form Govt. at central level and provide solutions to teacher's problems.

Sri Vardan Reddy expressed that APUS should strengthen its roots to speed up the resolutions to teachers problems and he felt that it is highly needed to protest for implementation of common service rules to teachers.

शैक्षिक मंथन द्वारा शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क
के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

भोपाल सिंह राजपुरोहित

वणागिया कृषि फार्म

निवासी खड़ात, तहसील आबूरोड़, जिला सिरोही राजस्थान
मो. - 9950229781

शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

अशोक पुरोहित
एडवोकेट
जिला मंत्री

भारतीय जनता पार्टी सिरोही
9782907323, 94145444444393

शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

दिनेश खण्डेलवाल
जिला अध्यक्ष

भारतीय जनता युवा मोर्चा
सिरोही राजस्थान

तहसील आबूरोड, जिला सिरोही राज0
मो. 9983793767

निवेश के हर कदम पर ..... आपके साथ

श्री अम्बाजी क्रेडिट को-ऑपरेटिव सोसायटी लि.

प्रधान कार्यालय
पत्थर गली, आबू रोड : 02974-221111

महिलाओं के लिए जमा धन 5 वर्ष में दो गुणा

5 वर्ष की जमाओं पर सर्वाधिक 14 % ब्याज दर

विद्या भारती राजस्थान

कार्यालय - सेवाधाम परिसर, सेक्टर-4, जवाहर नगर, जयपुर-4

दूरभाष 2653386, 2650614

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान की दशमी की परीक्षा में मेरिट में आने वाले भैया-बहिनों की संख्या :-

2008-09	2009-10	2010-11	2011-212	2012-13
11	19	14	8	8

- सत्र 2008-09 की माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा घोषित कक्षा द्वादश: की वरीयता सूची में विज्ञान संकाय के 2 भैया क्रमश: प्रथम एवं नवम् स्थान पर रहे। सत्र 2010-11 की वरीयता सूची में विज्ञान संकाय की 2 बहिनें क्रमश: चतुर्थ एवं सप्तम स्थान पर एवं वाणिज्य संकाय का 1 भैया अष्टम् स्थान पर रहा। सत्र 2012-13 की वरीयता सूची में वाणिज्य संकाय की 2 बहिनें क्रमश: षष्ठी एवं दशम् एवं कला संकाय की 1 बहिन तृतीय स्थान पर रही।
- **विद्या भारती द्वारा संचालित विद्यालय उत्तरोत्तर प्रगति की ओर :-**
- **औपचारिक पंजीकृत विद्यालयों की संख्या -**

उ. माध्य.	माध्यमिक	उ. प्राथमिक	प्राथमिक	शिशुवाटिका	उच्च शिक्षण सं.	कुल
78	293	283	239	54	4	951

- **अनोपचाकि विद्यालय**

संस्कार केन्द्र	एकल विद्यालय	कुल
487	412	899

- **सम्पूर्ण विद्यालयों का योग - 1850**
- राजस्थान में बालिका विद्यालयों की संख्या - 114
- आवासीय विद्यालय (क) पूर्ण आवासीय - 3 (ख) अर्धावासीय -21, योग - 24
- **विद्यालयों में छात्र संख्या**

छात्र संख्या	सत्र 2009-10	सत्र 2010-11	सत्र 2011-12	सत्र 2012-13	सत्र 2013-14
	257537	274476	283738	301955	307450

विद्या भारती राजस्थान द्वारा नये आयाम : -

- सत्र 2012-13 से सभी जिलों में स्मार्ट क्लासेज एवं E. Learning का शुभारम्भ।
- अंग्रेजी संभाषण (Spoken English) का विशेष प्रयास ।
- आधुनिक एवं वैज्ञानिक पद्धति से शिशवाटिकाओं का संचालन।
- बालकों में प्रतिभा का विकास हो, इस हेतु प्रतिभा विकास वर्ग का आयोजन।
- सुसज्जित विद्यालय भवन, कम्प्यूटर लैब एवं प्रयोगशाला युक्त विद्यालय एवं प्राथमिक कक्षाओं से कम्प्यूटर शिक्षण।
- आचार्य विकास के लिये विषय प्रशिक्षण वर्गों का आयोजन।
- बालकों के सर्वांगीण विकास हेतु शारीरिक, योग, संगीत, संस्कृत एवं नैतिक/ आध्यात्मिक विषयों पर विशेष बल।
- समाज के उपेक्षित वर्ग हेतु संस्कार केन्द्रों, एकल शिक्षकीय विद्यालयों एवं संवेदनशील क्षेत्रों में विद्यालयों का संचालन।
- प्रभावी अभिभावक सम्पर्क द्वारा भैया/ बहिनों का समुचित विकास।

(एम. एल. कालरा)
अध्यक्ष

(भरतराम कुम्हार)
मंत्री

With Best Compliments From

ACB (INDIA) LIMITED

Office : 7th Floor, Corporate Tower, Ambience Mail, NH-8,
Gurgaon-122002 (Haryana) Tel- 0124-2719000 Fax 0124-2719185
E-mail : corporate@acbinding.com Website :acbindia.com

शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

Sri Vishnu Transport Company

Head Office :
Near STPS Main Gate, Suratgarh-335804 (Raj.)

पंजीयन क्र / 126 / जोध / 95–96 0291–2757941

विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

E-Mail – vbssjod@rediffmail .com "श्रुतम्" कमला नेहरू नगर, जोधपुर

विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

भारतीय संस्कृति के अनुरूप श्रेष्ठ संस्कारों के साथ उत्तम शिक्षा देने के लिए प्रयासरत

बोर्ड परीक्षा परिणाम 2013

12 वीं बोर्ड परीक्षा परिणाम – 2013

क्र.	वर्ग	कुल विद्यालय	कुल छात्र	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	पूरक	अनु.
1.	विज्ञान	0	0	0	0	0	0	0
2.	वाणिज्य	0	0	0	0	0	0	0
3.	कला	0	0	0	0	0	0	0
	योग	**0**	**0**	**0**	**0**	**0 0**	**–**	**0**

10 वीं बोर्ड परीक्षा परिणाम – 2013

क्र.	जिला	कुल विद्यालय	कुल छात्र	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	पूरक	अनु.	प्रतिशत	वरीयता
1.	पाली	7	446	168	214	38	10	16	94	जिला 8
2.	बाली	5	220	54	114	20	16	16	84.45	
3.	सिरोही	8	519	257	221	21	9	11	96.16	राज्य 1, जिला 3
4.	जालोर	8	347	140	148	19	12	28	88	राज्य 1
5.	बालोतरा	3	199	85	79	7	11	17	85.92	
6.	बाड़मेर	10	375	211	135	12	5	16	94.4	राज्य 1, जिले 4
7.	जैसलमेर	5	210	116	70	3	16	5	90	
8.	जोधपुर जिला	7	420	231	140	27	8	14	94.76	जिले 3
9.	जोधपुर महानगर	12	537	306	180	26	9	16	95.34	जिले 1
10.	नागौर	8	455	243	150	29	10	23	92.74	जिले 2
11.	डीडवाना	2	83	44	29	3	3	4	92	जिले 1
12.	बीकानेर	8	457	250	157	18	15	15	93	
13.	श्रीगंगानगर	6	234	136	70	4	7	17	89.74	
14.	हनुमानगढ़	2	40	14	16	10	0	0	100	
	योग	**91**	**4542**	**2255**	**1723**	**237**	**131**	**198**		

राज्य स्तर पर वरीयता सूची में संख्या – **03**
जिला स्तर पर वरीयता सूची में संख्या – **23**
शत प्रतिशत परिणाम वाले विद्यालयों की संख्या : **22**

जोधपुर प्रान्त के सभी प्रधानाचार्यों, आचार्यों, समिति, समिति सदस्यों एवं मेधावी विद्यार्थियों को हार्दिक बधाई।

डॉ.दामोदर शर्मा
अध्यक्ष
विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

डॉ. नन्दकिशोर सोनी
मंत्री
विद्या भारती शिक्षा संस्थान, जोधपुर

जो पवित्र तथा साहसी है, वही
जगत् में सब कुछ कर सकता
है। माया-मोह से प्रभु सदा तुम्हारी
रक्षा करें। मैं तुम्हारे साथ
काम करने के लिए सदैव प्रस्तुत
हूं एवं हम लोग यदि स्वयं
अपने मित्र रहें तो प्रभु भी हमारे
लिए सैकड़ों मित्र भेजेंगे।

विश्व भारती शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय
सरदारशहर (चूरू)

व्यवस्थापकः- श्रीमती दीप्ति भारद्वाज

प्राचार्यः- ओमप्रकाश सैनी

शैक्षिक मंथन द्वारा शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

ओटाराम देवासी (भोपाजी)

पूर्व विधायक एवं

वर्तमान विधान सभा भाजपा प्रत्याशी

सिरोही शिवगंज विधानसभा क्षेत्र

मो. - 9829225095

ADARSH VIDYA MANDIR SHANKAR VIDYA PEETH

(AN ENGLISH MEDIUM (BOYS) RESIDENTIAL PUBLIC SCHOOL)

MOUNT ABU (RAJ.)

AFFILIATED TO CBSE | ESTABLISHED IN 1995

A GOLDEN OPPORTUNITY TO PREPARE YOUR CHILD FOR

XI, XII + JEE (MAIN / ADVANCE) ENGINEERING ENTRANCE EXAM.,

XI, XII + NEET - MEDICAL ENTRANCE EXAM.

ADMISSION ANNOUNCEMENT FOR AVM - SIP BATCH

AVM - SIP is a School Integrated program (Schooling + Competitive exam preparation)

नई शिक्षण प्रणाली है वक्त की आवश्यकता

Salient features of AVM Success Batch

1. Driven by the successful system of AVM
2. Finest Teachers & Teaching methodology.
3. Highly refined and researched study material
4. Online Test Engine
5. Video Module of Lectures
6. Smart Classes with Educomp Support
7. Time Line Programs
8. English Language Strengthening
9. Research & Development Backing
10. Successfully operational from last 5 years.

TEACHING METHODOLOGY

1. Concept Classroom Sessions (CCS)
2. Doubts Removal Sessions (DRS)
3. Daily Practice Problems (DPP)
4. Exhaustive Study Material (ESM)
5. Regulars Test Series - Online & Offline (RTS)
6. Batch Re-Shuffling Through Monthly Tests

SCHOOL CAMPUS

CLASS ROOMS

HOSTEL

SPORTS

Excellent Hostel Facility for Boys in School campus .

Yearlong Classroom contact programme

Target JEE (IIT / AIEEE) / NEET (AIIMS, PMT) - Medical Entrance

AVM SIP

Admission Open for the Academic Year 2014-15

- Only in Class VI and XI (Science Stream)
- Registration open from 01.01.2014
- Prospectus and registration fee Rs. 600/- only.

Entrance Test
23rd March 2014
(Sunday, 11.00 a.m.)

ADARSH VIDYA MANDIR

Shankar Vidya Peeth, Mount Abu (Raj.)

Contact : 9214174743, 9214673582 (O)
9214673627 (H)
E-mail : avmsvp@yahoo.com
visit us : adarshvidyamandir.org

शाश्वत जीवन मूल्य विशेषाङ्क के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

लुम्बाराम चौधरी

जिला महामंत्री भारतीय जनता पार्टी
सिरोही राज0

LIC
भारतीय जीवन बीमा निगम
LIFE INSURANCE CORPORATION OF INDIA

अभिकर्ता भारतीय जीवन बीमा निगम सिरोही
मो. 9414200670

विनोद परसरामपुरिया फाउण्डेशन

(लिम्का बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड में वर्णित सेवा कार्य)

स्व. विनोद परसरामपुरिया

नि:शुल्क स्वास्थ्य जॉच
नि: शुल्क शिक्षा एवं
नि: शुल्क पशु चिकित्सा
के क्षेत्र मे अग्रणी एवं समर्पित

निवेदक

अरुण परसरामपुरिया

प्रदेश कोषाध्यक्ष, भाजयुमो राजस्थान
मो. 94141-21508, 97995-11222